विषयानुक्रमणिका—

अलंकार-परिचय

अलंकार

जैसे गहने मनुष्य के शरीर की शोभा बढ़ाते हैं उसी प्रकार अलंकार कविता की शोभा बढ़ाते हैं। पर बिना गहनों के भी मनुष्य का शरीर सुन्दर हो सकता है उसी प्रकार बिना अलंकारों के भी अच्छी कविता हो सकती है। अभिप्राय यह है कि अलंकार कविता के लिये आवश्यक नहीं हैं और उनके बिना भी अच्छी कविता बन सकती है पर अलंकारों के होने से कविता की सुन्दरता और बढ़ जायगी।

जिन प्रकारों से कविता की शोभा बढ़ती है वे अलंकार कहलाते हैं अथवा यों कह सकते हैं कि वर्णन के चमत्कार-पूर्ण ढंग को अलंकार कहते हैं।

अलंकार दो प्रकार के होते हैं—

(१) शब्दालंकार, जब शब्द में चमत्कार हो,

) ंकार, जब अर्थ में चमत्कार हो

अर्थालंकार के उदाहरण

१) मुख मयंक सम मंजु मनोहर।

यहाँ मुख को चन्द्रमा के समान सुन्दर बताया गया है :ः उपमा अलंकार हुआ।

२) हरि-मुख कमल विलोकिय सुन्दर।

हरि के मुख कमल को देखो।

यहाँ मुख को कमल बताया अतः रूपक अलंकार है।

नोटः—अर्थालंकार में वाक्य के शब्दों को बदल कर की जगह वैसे ही अर्थ के अन्य शब्द रख देने से अलंकार चमत्कार नष्ट नहीं हो जाता किन्तु कायम रहता है।

ऊपर के उदाहरण (१) को बदल कर यदि हम यों करदें-

सुन्दर वदन सुधाकर जैसा।

भी उपमा अलंकार ज्यों का त्यों कायम रहेगा।

इसी प्रकार उदाहरण (२) को बदल कर यदि यों करदें—

प्रभु बदनाम्बुज मंजुल निरखिय।

भी मुख और कमल का रूपक कायम रहेगा।

नोट—अर्थालंकार में वाक्य के शब्दों को बदल कर पर्याय-शब्द रख देने से अलंकार नष्ट नहीं होता।

शब्दालंकार में वाक्य के शब्दों को बदल कर पर्याय-शब्द रख देने से, अर्थ न बदलने पर भी, अलंकार नष्ट हो जायगा।

यही दोनों का अन्तर है।

———

शब्दालंकार

शब्दालंकारों के मुख्य ४ भेद हैं—

(१) अनुप्रास—अक्षर या अक्षरों

(२) लाटानुप्रास—शब्द या शब्

आवृत्ति।

(३) यमक—शब्द या शब्दों की भि

(४) श्लेष—शब्द या शब्दों का एक

१—अनुप्रास

अनुप्रास में एक या अनेक अक्षर दो या

उदाहरण

(१) भगवान भक्तों की भयंकर भूरि भ

इसमें भ अक्षर ६ बार आया है

अनुप्रास है।

(२) भगवान भागें दुःख, सबको आइ

इसमें भ और ग ये दो अक्षर

प्रकार अन्त में इ और ये ये दो अ

इसमें दो अक्षरों का अनुप्रास है।

(३) तुलसी मनरंजन रंजित-अंजन नै

इस में दं, जि ये दो अक्षर दो बार

तीन बार आये हैं।

---

२ कष्ट।

भेद

नुप्रास के तीन भेद होते हैं—

(१) छेकानुप्रास—एक या अधिक अक्षरों का दो बार आना।

(२) वृत्यनुप्रास—एक या अधिक अक्षरों का तीन या अधिक बार आना।

(३) श्रुत्यनुप्रास—एक स्थान से उच्चारण होने वाले बहुत से अक्षरों का प्रयोग होना।

छेकानुप्रास

(१) आरम्भ में एक अक्षर दो बार आवे।
(२) आरम्भ में कई अक्षर दो बार आवें।
(३) अन्त में एक अक्षर दो बार आवे।
(४) अन्त में कई अक्षर दो बार आवें।

उदाहरण

१ आरम्भ में एक अक्षर की एक आवृत्ति

(१) सेवा समय दैव वन दीन्हा
मोर मनोरथ फलित न कीन्हा।
सेवा और समय में स आरंभ में एक एक बार आया।
दैव और दीन्हा में द आरंभ में एक एक बार आया।
मोर और मनोरथ में म आरंभ में एक एक बार आया।

(२) जो भव्य भारतवर्ष के कल्पान्त का कारण हुआ।
भव्य और भारत में भ का और
कल्पान्त और कारण में क का
छेकानुप्रास आरम्भ में है।

(३) पत्थर पिघले किन्तु तुम्हारा तब भी हृदय हिलेगा क्या ?
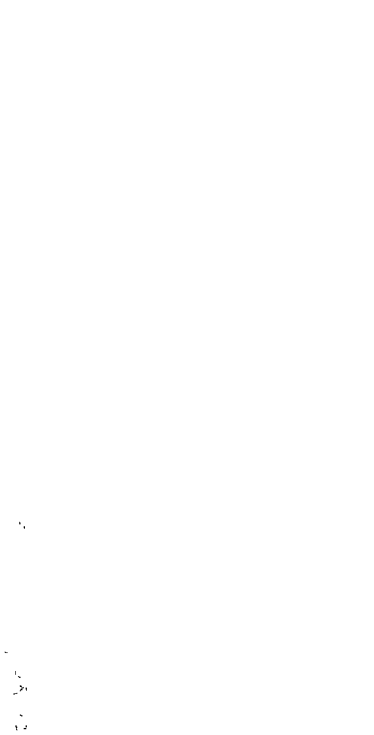
यहाँ री यह अक्षर अन्त में कई बार आया है।

(२) मन कौंनै नानै गृथा सौंनै गानै राम।

यहाँ नै यह अक्षर अन्त में कई बार आया है।

(३) न्यारी तीन लोक से है प्यारी सुखकारी भारी
सारी मनोहारी छटा उसमें समाई है।

यहाँ री यह अक्षर अनेक बार आया है।

३ अन्त में अनेक अक्षरों का

(१) छोरटी है गोरटी या चोरटी अहीर की।

यहाँ र और ट ये दो अक्षर अन्त में कई बार आये हैं।

(२) सदन हैं सजती बहु बालिका
उमगती ठगती अनुरागती।

इसमें ग और ती ये दो अक्षर अन्त में तीन बार आये हैं।

(३) गाइगो तान जमाइगो नेह रिझाइगो प्रान चराइगो गैया।

यहाँ इ और ग इन दो अक्षरों की अन्त में कई बार आवृत्ति हुई है।

(३) गुनगनि नित निसिदिन देखत गुनदारि निगुनाई
इसमें न इतने बार आये हैं—
न त न द न न द न न न द न द न न न।

२—लाटानुप्रास

जब शब्द कई बार आये और प्रत्येक बार एक ही अर्थ ।
परन्तु अन्वय प्रत्येक बार भिन्न शब्द के साथ हो (या यों
प्रत्येक बार एक ही शब्द के साथ अन्वय हो तो भिन्न प्रका
का हो)।

उदाहरण

(१) हे उत्तरा के धन, रहो तुम उत्तरा के पास में।

यहाँ उत्तरा ये शब्द दो बार आया है। दोनों बार अ
यही है पर उसका अन्वय पहली बार धन के साथ औ
दूसरी बार पास के साथ होता है।

(२) पहनो कान्त तुम्हीं यह मेरी जयमाला सी वरमाला।

यहाँ माला शब्द दो बार आया है। दोनों बार अ
एक ही है पहली बार अन्वय जय के साथ और दूसरी बा
वर के साथ होता है।

(३) पूत सपूत तो क्यों धन संचै
पूत कपूत तो क्यों धन संचै।

यहाँ कई शब्द दो बार आये हैं यथा—

पूत, तो, क्यों, धन, संचै।

प्रथम बार सबका अन्वय सपूत के साथ है और दूसरी
बार कपूत के साथ।

(४) मुनि मिय-सपन भरे जल लोचन
भये सोच-वस सोच-विमोचन ।

यहाँ सोच शब्द दो बार आया है

(५) मरो परन्तु यों मरो कि याद जो करें सभी ।

(६) वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिये मरे ।

नोट—यदि शब्द उसी अर्थ में एक से अधिक बार आवे और अन्वय भी प्रत्येक बार एक ही शब्द के साथ और एकसा ही हो तो उस अवस्था में वीप्सा या पुनरुक्ति-प्रकाश अलंकार होता है । यथा—

(१) गुरुदेव जाता है समय रक्षा करो ! रक्षा करो !

(२) अँखियाँ सुख पाइहैं पाइहैं पाइहैं ।

(३) पल पल जिसके मैं पंथ को देखती थी ।

(४) गृह गृह अकुलातीं गोपकी पत्नियाँ हैं ।

(५) हम डूब रहे दुख-सागर में अब बाँह प्रभो धरिये धरिये ।

३—यमक

जब शब्द कई बार आवे और अर्थ प्रत्येक बार भिन्न हो ।

(२) तीन बेर खातीं ते वे बीन[1] बेर खातीं हैं।

बेर = (१) बार (२) बेर नाम का फल।

(३) कदंब के पुष्पकदंब की छटा

कदंब = (१) एक पेड़ का नाम (२) समूह

(४) बना अतीयाकुल[2] म्लान चित्त को
विदारता था तरु कोविदार का।

इसमें विदार शब्दांश दो बार आया है। यह पूरा शब्द नहीं है। पहला विदार 'विदारता' का और दूसरा विदार कोविदार का अंश है। यहाँ विदार शब्दांश अर्थ हीन है। शब्दांश के यमक में दोनों शब्दांश निरर्थक होते हैं। कभी कभी एक शब्दांश और एक शब्द का यमक भी होता है। यथा—

(५) कुमोदिनी मानस-मोदिनी कहीं।

यहाँ मोदिनी का यमक है। पहला मोदिनी कुमोदिनी शब्द का अंश है एवं दूसरा स्वतंत्र शब्द है जिसका अर्थ है प्रसन्नता देनेवाली। इस प्रकार यमक कई प्रकार का हो सकता है, यथा—

(१) सार्थक + सार्थक (उदाहरण १, २. ३,)
(२) निरर्थक + निरर्थक (उदाहरण ४)
(३) सार्थक + निरर्थक या (नीचे उदाहरण १)
निरर्थक + सार्थक (उदाहरण ५)

और उदाहरण

(१) इच्छा तुम न करो सहने की आप आपदाघातों को।
(आप = (१) स्वयं, (२) आपदाघात का अंश)

---

१ चुनकर २ अतीव व्याकुल।

(२) नन्द गये हैं जब भी पाले जन में सुमन महके हैं।

(३) जब जिन कलपता है मुझे कल न होके
तिन तिन कलपता है नहीं प्राण मेरा।

(कलपता है = (१) व्याकुल करता है (२) चैन पाता है)

(४) तेरे प्रेम में ही चलदल चलदल होते
अचल उसीसे होते अटल अचल हैं।

(चलदल = (१) पीपल (२) हिलते हुए पत्तोंवाला
अचल = (१) जो चलायमान न हो (२) पहाड़)

६—श्लेष

जब एक से अधिक अर्थवाले शब्द या शब्दों का प्रयोग किया जाय।

(१) चलिहारी नृप कूप की गुन बिन बूँद न देहि।

(अर्थ—राजा और कूप गुण बिना कुछ भी नहीं देते) यहाँ गुण के दो अर्थ हैं एक राजा के साथ लगता है और दूसरा कूप के साथ—

राजा के साथ गुण का अर्थ है—सद्गुण

और कूप के साथ गुण का अर्थ है—रस्सी।

(२) पानी गये न ऊबरै मोती मानुस चून।

(पानी नाश हो जाने से मोती मनुष्य और चून किसी काम के नहीं रहते)

यहाँ पानी के तीन अर्थ हैं—
मोती के साथ—आब या कान्ति
मनुष्य के साथ—इज्जत या प्रतिष्ठा
चून के साथ—जल।

पानी के एक से अधिक अर्थ होने के कारण यहाँ श्लेष अलंकार हुआ।

(३) जहाँ गाँठ तहाँ रस नहीं यह जानत सब कोइ।

ईख के साथ—गाँठ = ईख की पोर,
रस = मीठा जलीय अंश।

मनुष्य के साथ—गाँठ = कपट, मनोमालिन्य,
रस = प्रेम, आनन्द।

(४) नवजीवन दो घनश्याम हमें।

मेघ-पक्ष में—जीवन = पानी
घनश्याम = काला मेघ।

कृष्ण-पक्ष में—जीवन = जीना
घनश्याम = कृष्ण।

———

अर्थालंकार

जब चमत्कार शब्द में न रह कर अर्थ में रहे तब अर्थालं-
ार होता है। वाक्य के शब्दों को बदल कर वैसे अर्थवाले
न्य शब्द रख देने से अर्थालंकार का चमत्कार मिट नहीं
ता।

उदाहरण के लिये पीछे पृष्ठ ३ देखो।

मुख्य मुख्य अर्थालंकार आगे दिये जाते हैं।

१—उपमा

उपमा में किसी वस्तु को दूसरी वस्तु के समान बतलाया जाता है। दोनों वस्तुओं में कोई साधारण धर्म यानी ऐसा गुण होता है जो दोनों में पाया जाता है। उस साधारण धर्म के कारण दोनों की समानता बतलाई जाती है।

उपमा में ये चार बातें आवश्यक होती हैं—

(१) उपमेय—जो वर्णन का विषय है और जिसको हम किसी अन्य के समान बताते हैं अर्थात् जिसकी समानता किसी के साथ बतलाई जाती है।

(२) उपमान—कोई प्रसिद्ध वस्तु जिसके समान उपमेय को बताया जाय।

(३) वाचक शब्द—जिस शब्द के द्वारा उपमेय और उपमान में समानता बताई जाय।

(४) साधारण धर्म—वह गुण या क्रिया जो उपमेय और उपमान दोनों में हो और जिसके कारण दोनों में समानता बताई जाय।

ये चारों कभी शब्दों द्वारा उल्लिखित होते हैं और कभी नहीं होते अर्थात् छिपे रहते हैं। तब उनका अध्याहार करना पड़ता है।

उपमा के उदाहरण

(१) मुख कमल के समान सुन्दर है।

इस उदाहरण में—

(१) मुख उपमेय है।
(२) कमल उपमान है।
(३) समान वाचक शब्द है।
(४) सुन्दर साधारण धर्म है।

(२) मुख कमल सा खिल गया।

इस उदाहरण में—

(१) मुख उपमेय है।
(२) कमल उपमान है।
(३) सा वाचक शब्द है।
(४) खिल गया साधारण धर्म है।

उपमा के भेद

उपमा के दो भेद होते हैं—

(१) पूर्णोपमा
(२) लुप्तोपमा।

(१) पूर्णोपमा

जब उपमेय, उपमान, वाचक शब्द और साधारण धर्म इन चारों का शब्दों में उल्लेख हो तब पूर्णोपमा होती है। यथा—

(१) मुख कमल जैसा सुन्दर है।

इसमें—

(१) मुख — उपमेय
(२) कमल — उपमान
(३) जैसा — वाचक शब्द
(४) सुन्दर — साधारण धर्म है।

ये चारों शब्दों द्वारा बताये गये हैं इसलिये यहाँ पूर्णोपमा हुई।

(२) सागर सा गंभीर हृदय हो
गिरि सा ऊँचा हो जिसका मन।
ध्रुव[1] सा जिसका अटल लक्ष्य हो
दिनकर सा हो नियमित जीवन॥

इसमें—

(१) हृदय, मन, लक्ष्य, जीवन — उपमेय
(२) सागर, गिरि, ध्रुव, दिनकर — उपमान
(३) सा — वाचक शब्द
(४) गंभीर, ऊँचा, अटल, नियमित — साधारण धर्म है।

चारों का शब्दों में उल्लेख होने से पूर्णोपमा हुई।

---

१ ध्रुव तारा।
२

(३) ललित सी मुख मंडल पै हँसी
विकच[1] पंकज ऊपर ज्यों कला[2]।

इसमें—

(१) मुख-मंडल और हँसी — उपमेय
(२) पंकज और कला — उपमान
(३) ज्यों — वाचक शब्द
(४) ललित — साधारण धर्म है।

चारों का शब्दों में उल्लेख है अतः पूर्णोपमा हुई।

(४) मुनि सुरसरि[3] सम पावन बानी।
भई सनेह-बिकल सब रानी॥

इसमें—

(१) बानी — उपमेय
(२) सुरसरि — उपमान
(३) सम — वाचक शब्द
(४) पावन — साधारण धर्म है।

चारों का शब्दों में उल्लेख होने से पूर्णोपमा हुई।

(५) जो सृजि पालइ हरइ बहोरी[4]।
बाल केलि[5] सम बिधिगति[6] भोरी॥

यहाँ—

(१) विधिगति — उपमेय
(२) बालकेलि — उपमान
(३) सम — वाचक शब्द

१ खिला हुआ २ चन्द्रमा की कला ३ गंगा ४ फिर ५ खेल,
६ विधाता की लीला।

(४) मोरी
मरजना- पालना
और फिर हरना — साधारण धर्म है।

(६) पत्ते सा उड़ जाय तुम्हारे
वायुवेग में पड़ वह पामर[1]।

इसमें—

(१) वह — उपमेय
(२) पत्ता — उपमान
(३) सा — वाचक शब्द
(४) उड़ जाय — साधारण धर्म है।

(७) कोमल ! कुसुम समान देह हा ! हुई तप्त-अंगार-मयी।

इसमें —

(१) देह — उपमेय
(२) कुसुम — उपमान
(३) समान — वाचक शब्द
(४) कोमल — साधारण धर्म है।

(२) लुप्तोपमा

जब उपमेय, उपमान, वाचक शब्द और साधारण धर्म इन चारों में से किसी एक या दो या तीन का शब्द द्वारा उल्लेख न किया गया हो। यथा

(१) मुख कमल जैसा है।

यहाँ सुन्दर इस साधारण धर्म का लोप किया गया है अर्थात् शब्द द्वारा उसका उल्लेख नहीं किया गया अतः लुप्तोपमा हुई।

---

१ नीच।

(२) उर पर जिसके है सोहती मुक्तमाला।
यह नयननलिनी से नेत्रवाला कहाँ है॥

इसमें—

(१) नेत्र	उपमेय
(२) नलिनी	उपमान
(३) से	वाचक शब्द है।

यहाँ सुन्दर इस साधारण धर्म का उल्लेख नहीं कि गया अतः यहाँ लुप्तोपमा हुई।

(३) और किसी दुर्जय वैरी से।
लेना है तुमको प्रतिशोध॥
तो आज्ञा दो उसे जला दे।
कालानल सा मेरा क्रोध॥

इसमें—

(१) क्रोध	उपमेय
(२) कालानल	उपमान
(३) सा	वाचक शब्द है।

यहाँ पर साधारण धर्म भयंकर का उल्लेख नहीं है। यह धर्मलुप्ता उपमा हुई।

(४) कुलिस[१]-कठोर सुनत कटु बानी।
बिलपत लखन सीय सब रानी॥

इसमें—

(१) कटु बानी उपमेय

---

१ वज्र।

(२) कृत्रिम उपमान
(३) कठोर साधारण धर्म है।

यहाँ वाचक शब्द लुप्त है अतः वाचक-लुप्ता उपमा हुई।

(४) कुलिश-वचन कह कभी किसी का भाई जी न दुखाओ।

इसमें—

(१) वचन उपमेय
(२) कुलिश उपमान है।

वाचक शब्द और साधारण धर्म (कठोर) दोनों लुप्त हैं अतः यहां वाचक-धर्म-लुप्तोपमा हुई।

विशेष—

१ जब उपमेय एक, उपमान एक और साधारण धर्म अनेक हों तो समुच्चयोपमा होती है। यथा—

मुख कमल के समान सुन्दर और सुरभित है।

२ जब उपमेय एक और उपमान अनेक हों तो मालोपमा होती है। यथा—

(१) मुख कमल और चन्द्रमा के समान सुन्दर है।
(२) मुख कमल के समान कोमल और चन्द्रमा के समान सुन्दर है।

३ उपमा के वाचक शब्द—सा, जैसा, सदृश, सरिस, सरीखा, सम, समान, तुल्य, भाँति, तरह, प्रकार, ज्यों, इव, यथा इत्यादि।

२—रूपक

जब एक वस्तु पर दूसरी वस्तु का आरोप किया जा यानी एक वस्तु को दूसरी वस्तु बना दिया जाय वहाँ रूप अलंकार होता है ।

यथा—

(१) मुख कमल है ।
(२) मुख-कमल ।

इन उदाहरणों में मुख पर कमल का आरोप किया ग अर्थात् मुख को कमल का रूप दिया गया या यों कहिये मुख को कमल बना दिया गया है ।

(३) चरन-सरोज पखारन लागा ।
यहाँ चरणों को कमल बनाया गया है ।

(४) मयंक है श्याम बिना कलंक का ।
यहाँ श्याम को मयंक बनाया गया है ।

(५) उदित उदय-गिरि मंच पर रघुबर बाल-पतंग ।
बिकसे सन्त सरोज सब हरखे लोचन भृंग ॥

यहाँ मंच को उदयाचल, श्रीरामचन्द्र को बाल-सूर्य, सन्त को कमल और लोचनों को भ्रमर बनाकर रूपक बाँधा है ।

(६) हिमशृंगों को छोड़ रही हैं दिनकर की किरणें क्षण क्षण प
तिरती हैं वे घन नौका पर नभ सागर में विविध रूप ध

यहाँ मेघों को नौका और आकाश को सागर बना गया है ।

चन्द्रातप[1] था व्योम[2], तारक रत्न जड़े थे।
चन्द्र दीप था सोम[3] प्रजा तरु पुंज खड़े थे॥
शान्त नदी का स्रोत बिछा था अति सुखकारी।
कमल-कली का नृत्य हो रहा था मन-हारी॥

यहाँ कानन का रूपक राज्य के साथ बाँधा गया है।

या—

राज्य	कानन
चन्द्रातप	व्योम
रत्न	तारे
दीप	चन्द्रमा
प्रजा	तरुपुंज
बिछावन	शान्त नदी का स्रोत
नर्तकी	कमल-कली

(४) कौशिक[4] रूप पयोनिधि[5] पावन।
प्रेम वारि अवगाह सुहावन॥
राम रूप राकेश[6] निहारी।
बढ़ी बीचि[7] पुलकावलि भारी॥

यहाँ समुद्र का रूपक विश्वामित्रजी के साथ बाँधा गया है।

यथा—

समुद्र	विश्वामित्र
पानी	प्रेम
चन्द्रमा	श्रीराम
लहर	पुलकावली

१ चँदोवा, वितान २ आकाश ३ चन्द्रमा ४ विश्वामित्र ५ समुद्र ६ चन्द्रमा ७ तरंग।

(५) प्रात प्रातकृत करि रघुराई। तीरथ-राज दीख प्रभु जाई॥
सचिव सत्य, श्रद्धा प्रियनारी। माधव[1] सरिस मीत हितकारी॥
सेन सकल तीरथ बरबीरा। कलुष अनीक[2] दलन रनधीरा॥
संगम[3] सिंहासन सुठि सोहा। छत्र अछयबट मुनिमन मोहा॥
चँवर जमुन अरु गंग-तरंगा। देखि होहिं दुख-दारिद-भंगा॥

यहाँ राजा का रूपक तीर्थराज प्रयाग के साथ बाँधा गया है, यथा—

राजा	तीर्थराज प्रयाग
मन्त्री	सत्य
रानी	श्रद्धा
मित्र	विष्णु
सेना	तीर्थस्थान
शत्रु	पाप
सिंहासन	त्रिवेणी का संगम
छत्र	अक्षयवट
चमर	गंगा और यमुना की तरंगें

(६) बरखा रुत रघुपति-भगति तुलसी सालि[4] सुदास।
राम-नाम वर बरन[5] जुग सावन-भादौं मास॥

यहाँ वर्षा का रूपक रामभक्ति के साथ बाँधा गया है। यथा—

वर्षा	रामभक्ति
धान	तुलसी जैसे रामभक्त
सावन-भादों	'राम' ये दो अक्षर।

१ विष्णु २ सेना ३ गंगा यमुना व सरस्वती का संगम स्थान ४ शालि, धान ५ वर्ण।

(२) निरंग

जब केवल उपमान का आरोप उपमेय पर किया जाय और उपमान के अंगों का आरोप उपमेय के अंगों पर न किया जाय।

यथा—

(१) चरन कमल मृदु मंजु तुम्हारे।

यहाँ चरणों पर कमलों का आरोप किया गया पर कमलों के अंगों का आरोप नहीं किया गया।

(२) अभिमन्यु-रूपी रत्न सहसा जो हमारा खो गया।

यहाँ अभिमन्यु को रत्न बनाया है।

(३) बेसुरी भले ही रहे मेरी उर वीणा सदा
उसको उसीका अनुराग राग गाना है।

यहाँ उर पर वीणा का आरोप किया गया है।

(४) खोलकर अगणित तारक-नयन निज
देखता नभस्थल सदैव तेरी ओर है।

यहाँ तारों को आकाश के नेत्र बनाया गया है।

(३) परंपरित रूपक

परंपरित में दो रूपक होते हैं एक गौण और दूसरा प्रधान। प्रधान रूपक का कारण या आधार गौण रूपक होता है जो पहले किया जाता है।

यथा—

(१) आशा मेरे हृदय-मरु[1] की मंजु मन्दाकिनी[2] है

---

[1] हृदयरूपी मरुभूमि [2] गंगानदी।

यहां दो रूपक हैं एक हृदय और मद का तथा दू
माया और मन्दाकिनी का। दूसरा रूपक प्रधान है पर म
को मन्दाकिनी इसलिये बनाया है कि पहले हृदय को मद ब
चुके थे। इसलिये इस रूपक का कारण एक गौण रूपक (ह
और मद का) है।

(२) रविकुल-कैरव[१]-विधु रघुनायक।

यहां दो रूपक हैं। रविकुल को कैरव और रघुनायक
विधु बनाया गया है। पर रघुनायक को विधु इसलिये बना
है कि पहले रविकुल को कैरव बना चुके थे अतः प्रधान रूप
(रघुनायक और विधु का) कारण गौण रूपक (रवि
और कैरव का) है।

(३) किसके मनोज्ञ मुख-चन्द्र को निहारकर
मेरा उर सागर है सदैव है उछलता।

पहले मुख को चन्द्र बनाया इसलिये फिर उर को सा
बनाया। उर-सागर यह प्रधान रूपक है जिसका कारण मु
चन्द्र यह गौण रूपक है।

---

१ कुमुदिनी।

३—उल्लेख

उल्लेख में किसी वस्तु का अनेक प्रकार से वर्णन किया ा है।

इसके दो भेद होते हैं—

) प्रथम उल्लेख—
जब अनेक व्यक्ति किसी वस्तु को अनेक प्रकार से देखें, सुनें, समझें या वर्णन करें।

) द्वितीय उल्लेख—
जब एक व्यक्ति किसी वस्तु का अनेक प्रकार से वर्णन करे।

प्रथम उल्लेख
अनेक व्यक्ति द्वारा
उदाहरण

(१) जिनके रही भावना जैसी।
प्रभु-मूरति देखी तिन्ह तैसी॥
विदुषन[1] प्रभु विराट-मय दीसा।
बहु मुख कर पगु लोचन सीसा॥
जोगिन्ह परम-तत्व-मय भासा।
सान्त सुद्ध मन सहज प्रकासा॥
हरि-भगतन देखेउ दोउ भ्राता।
इष्टदेव सम सब सुखदाता॥
देखहिं भूप महारन-धीरा।
मनहु बीर-रस धरे सरीरा॥

१. विद्वानों को।

रहे असुर छल-छोनिप बेषा[1]।
तिन्ह प्रभु प्रगट काल सम देखा॥
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई।
नर-भूषन लोचन-सुखदाई॥
सहित बिदेह[2] बिलोकहिं रानी।
सिसु सम प्रीति न जाय बखानी॥
जेहि बिधि रहा जाहि जस भाऊ[3]।
तेहि तस देखेउ कोसल राऊ॥

श्रीरामचन्द्र लक्ष्मण के साथ जनक के धनुर्यज्ञ में पधा
यहाँ भिन्न भिन्न लोगों ने उन्हें भिन्न भिन्न प्रकार से देखा
कि ऊपर बताया गया है। अनेक व्यक्तियों ने अनेक प्रका
देखा अतः प्रथम उल्लेख है।

(२) उस काल नन्दलाल को ····मल्लों ने मल्ल माना,
ग्वोनि राजा जाना, देवताओं ने अपना प्रभु सूझा,
पालों ने सखा, नन्द उपनन्द ने बालक समझा, औ यु
युवतियों ने रूप-निधान और कंसादिक राक्षसों ने
समान देखा। —(प्रेमसागर अध्याय ४४)

यहाँ एक श्रीकृष्ण को अनेक लोगों ने अनेक प्रकार से
या समझा अतः यहाँ भी प्रथम उल्लेख है।

(३) कविजन कल्पद्रुम कहैं ग्यानी ग्यान-समुद्र।
दुर्जन के गन कहत हैं भावसिंह रनरुद्र।

यहाँ एक भावसिंह को कवि, ज्ञानी, दुर्जन ये अनेक
अनेक प्रकार से वर्णन करते हैं।

---

१ राजाओं का कपट वेश बनाए हुए २ जनक ३ भावना।

द्वितीय उल्लेख

एक व्यक्ति द्वारा

उदाहरण

(१) यों थे कलाकर' द्विजा कहते विहारी'।
है स्वर्ण-मेरु' यह मेदिनि'-माधुरी का॥
है कल्प-पादप अनूपमताटवी' का।
आनन्द-अंबुधि'-विचित्र-महामणी है॥
है ज्योति-आकर,' पयोधर' है सुधा का।
शोभा-निकेत प्रिय वल्लभ है निशा का॥
है भाल का प्रकृति के अभिराम भूषा'।
सर्वस्व है परम रूपवती कला का॥

यहाँ एक ही चन्द्रमा का श्रीकृष्ण ने अनेक प्रकार से वर्णन
किया है।

१—भ्रान्तिमान्

किसी वस्तु को दूसरी वस्तु समझ लेना भ्रान्ति कहलाता है। जहाँ किसी प्रकार के सादृश्य के कारण उपमेय को उपमान समझ लिया जाए वहाँ भ्रान्तिमान् अलंकार होता है। इसमें देखने वाले को धोखा या भ्रम हो जाता है।

उदाहरण

(१) जो जेहि मन भावै सो लेहीं।
मणि मुख मेलि डार कपि देहीं॥

वानर मणियों को फल समझ कर उनको खाने के लिये मुंह में डाल लेते हैं। फिर कड़ा लगने पर उगल देते हैं। यहाँ मणि में फल का भ्रम हुआ इससे भ्रान्तिमान् अलंकार हुआ।

(२) पेशी समझ माणिक्य को वह विहग देखो ले चला।

यहाँ पक्षी को माणिक में रुधिर से सनी मांस-पेशी का भ्रम हुआ (मणिक लाल रंग की मणि होती है)।

(३) बेसर-मोती-दुति-झलक, परी अधर पर आन।
पट पोंछति चूनो समुझि, नारी निपट अयान॥

किसी स्त्री के होठों पर नाक में पहने हुए बेसर के मोती की श्वेत झलक पड़ रही है। उस श्वेत झलक को वह चूना समझती है और अधरों पर कपड़ा रखकर पोंछने की कोशिश करती है। यहाँ मोती की आभा में चूने का भ्रम हुआ।

(४) समुझि तुमहिं घनश्याम हरि, नाचि उठे वन मोर।

घनश्याम श्रीकृष्ण को देखकर मोरों को सजल बादलों की भ्रांति हुई और वे नाचने लगे।

(५) हरि-मुख मंजु मयंक गुनि, निरखत सतत चकोर ।
फूल्यो पंकज समुझि कै, घिरे भ्रमर चहुँ ओर ॥

यहाँ हरि का मुख देखकर चकोर को चन्द्रमा का और भ्रमरों को फूले हुए कमल का भ्रम हुआ ।

— —

५—सन्देह

जब किसी एक वस्तु में कई वस्तुओं का ज्ञान हो या कि वस्तु में कई वस्तुओं के होने की संभावना पाई जाय निश्चय न हो कि कौनसी वस्तु है तो वहां सन्देह होता है।

जब उपमेय में सादृश्य के कारण अनेक उपमानों संभावना जान पड़े और यह निश्चय न हो कि यह उपमेय है तो वहाँ सन्देह अलंकार होता है।

सन्देह के वाचक शब्द—या, अथवा, कि, कै, किधौं, कै इत्यादि होते हैं।

(१) विकच[1] जलज कैधौं[2] मधुर, कैधौं मंजु मयंक।
कैधौं हरि को चारु यह, मुख कोमल निकलंक॥

यहाँ हरि के मुख को देख कर निश्चय नहीं होता कि खिला हुआ कमल है या मंजु मयंक है या हरि का सुन्दर मु है। तीनों में संदेह रहने से संदेह अलंकार हुआ।

(२) ए कौन कहाँ ते आये।
मुनिसुत किधौं[2], भूप बालक, किधौं ब्रह्म जीव जग जाये
किधौं रवि-सुवन[4], मदन रितुपति, किधौं हरि हर बेप बनाये

श्रीराम और लक्ष्मण को देखकर जनक को सन्देह होता कि ये दो मुनिबालक हैं, या दो राजपुत्र हैं, या ब्रह्म और जी

---

१ खिले हुए २ अथवा ३ जन्म लिया है ४ अश्विनी कुमार बहुत सुन्दर माने गये हैं।

या अश्विनी कुमार हैं, या काम और वसन्त हैं या हरि और हैं।

जहाँ पहले सन्देह हो और पीछे किसी कारण से मिट वहाँ पर भी सन्देह अलंकार होता है।

—

घनच्युत चपला कै लता, संसय भयो निहारि।
दीरघ साँसनि हेरि कपि, किय सीता निरधारि॥

६—उत्प्रेक्षा

उत्प्रेक्षा में एक वस्तु में अन्य वस्तु की संभावना की ज[ाती]
है अर्थात् एक वस्तु को अन्य वस्तु मान लिया जाता है।
यथा—

(१) नेत्र मानो कमल हैं।

नेत्र वास्तव में कमल नहीं हैं किन्तु मान लिया गया है
ये कमल हैं। दोनों वस्तुओं में कोई समान धर्म होने के का[रण]
ऐसी संभावना की जाती है। संभावना करने के लिये [जो]
शब्दों का प्रयोग किया जाता है जो उत्प्रेक्षा के वाचक श[ब्द]
कहे जाते हैं, यथा—मानो, मनो, मनु, मनहुँ, जानो, ज[नु]
सा इत्यादि।

(२) आनन अनूप मानो फुल्ल जलजात है।

यहाँ पर आनन (मुख) में फूले हुए कमल की संभावना [की]
गई है अर्थात् आनन को कमल माना गया है क्योंकि वह फ[ूले]
कमल जैसा ही सुन्दर है।

(३) नाना-रंगी जलद नभ में दीखते हैं अनूठे।
योद्धा मानो विविध रंग के वस्त्र धारे हुए हैं॥

यहाँ अनेक रंग के मेघों में अनेक रंग के वस्त्र पहने [हुए]
योद्धाओं की कल्पना की गई है।

(४) कहती हुई यों उत्तरा के नेत्र जल से भर गये।
हिम के कणों से पूर्ण मानो होगये पंकज नये॥

यहाँ आँसुओं से भरे हुए उत्तरा के नेत्रों में ओसकण-यु[क्त]
पंकज की संभावना की गई है।

३) सुनि कटु वचन कठिन कैकेई।
मनहुँ लोन जरे पर देई॥

यहाँ कटु वचन के कथन में जरे पर नमक लगाने की रचना की गई है।

उत्प्रेक्षा के भेद

उत्प्रेक्षा के तीन भेद होते हैं—

(१) वस्तूत्प्रेक्षा
(२) हेतूत्प्रेक्षा
(३) फलोत्प्रेक्षा

(१) वस्तूत्प्रेक्षा

वस्तूत्प्रेक्षा में एक वस्तु में दूसरी वस्तु की संभावना की जाती है अर्थात् एक वस्तु को दूसरी वस्तु मान लिया जाता है।

१) लसत मंजु मुनि मण्डली, मध्य सीय रघुचन्द।
ज्ञान सभा जनु तनु धरे, भगति सच्चिदानन्द॥

यहाँ मुनिमण्डली में ज्ञान सभा की और सीताराम में भक्ति एवं सच्चिदानन्द की संभावना की गई है।

(२) हरषि हृदय दसरथ-पुर आई।
जनु ग्रह-दसा दुसह दुखदाई॥

यहाँ सरस्वती को अयोध्या की दुस्सह ग्रहदशा माना है।

३) प्रात समय उठि सोवत हरि को वदन उघारयो नन्द।
स्वच्छ सेज में ते मुख निकस्यो गयो तिमिर मिटि मन्द॥
मानो मथि पय-सिंधु फेन फटि, दरस दिखायो चन्द।

स्वच्छ सेज पर चद्दर दूर करने से श्रीकृष्ण का मुख दिखाई दिया मानो क्षीर-सागर के मथने पर उसका फेन फटा और भीतर से चन्द्रमा दिखाई दिया। यहाँ स्वच्छ शय्या में

क्षीर-सागर की, चद्दर में फेन की और श्रीकृष्ण के मुख
चन्द्रमा की संभावना की गई है। (नोट—देवताओं ने समु
मथा था तब चन्द्रमा उसमें से निकला था)।

विशेष उदाहरणों के लिये पीछे उत्प्रेक्षा शीर्षक
नीचे देखो।

(२) हेतूत्प्रेक्षा

हेतूत्प्रेक्षा में अहेतु में हेतु की संभावना की जाती
अर्थात् जो हेतु नहीं है उसे हेतु मान लिया जाता है।

(१) अरुण भये कोमल चरण भुवि चलिवे ते मानु।

कोमल चरण मानो पृथ्वी पर चलने से रक्तवर्ण हो
यहाँ चरणों के लाल होने का हेतु पृथ्वी पर चलना
गया है यद्यपि यह हेतु नहीं है क्योंकि पृथ्वी पर चलने
चरण लाल नहीं हुए वे स्वभावतः ही लाल थे।

(२) मुख सम नहिं याते मनो चन्दहि छाया छाय।

चन्द्रमा मुख के समान नहीं है मानो इसीलिये उस
कालिमा छाये रहती है।

कालिमा चन्द्रमा को इसलिये नहीं छाये रहती कि वह
के समान नहीं है किन्तु यह एक स्वाभाविक बात है। फिर
कालिमा के छाई रहने का कारण यह बताया गया है कि
मुख के समान नहीं है। इस प्रकार यहाँ अहेतु को हेतु
लिया है।

(३) मुख सम नहिं याते कमल मनु जल रह्यो छिपाइ।

कमल जल में जाकर छिप गया इसका कारण यह
है कि वह मुख के समान नहीं होने के कारण लज्जित हो
था फिर भी इसको कारण माना गया है। इस प्रकार
अहेतु में हेतु की सम्भावना की गई है।

(३) फलोत्प्रेक्षा

फलोत्प्रेक्षा में अफल में फल की संभावना की जाती है अर्थात् जो फल या उद्देश्य नहीं होता उसको फल या उद्देश्य मान लिया जाता है।

(१) तुअ[1] पद समता को कमल जल सेवत इक पाँय[2]।

मानो तुम्हारे चरणों की समता प्राप्त करने को कमल जल में एक पैर (कमल-नाल) पर खड़ा हो कर तपस्या कर रहा है।

कमल जल में एक पैर यानी कमल नाल पर खड़ा रहता है पर इस उद्देश्य से नहीं कि चरणों की समता प्राप्त करे। चरणों की समता प्राप्त करना उसका उद्देश्य नहीं है यानी यह इस फल को ध्यान में रख कर खड़ा होने का कार्य नहीं करता। इस फल की आकांक्षा न होने पर भी इसकी संभावना की गई है। अतः यहाँ फलोत्प्रेक्षा है।

(२) रोज अन्हात[3] है छीरधि में[4] ससि
  ता मुख को समता लहिबे को।

चन्द्रमा सदा क्षीर-सागर में मग्न होता है पर उसका उद्देश्य यह नहीं होता कि मुख की समता प्राप्त करे। इस फल की कामना वह नहीं करता। पर यहां माना गया है कि वह इसी फल की कामना करके ऐसा करता है। इस प्रकार यहाँ अफल को फल माना है जिससे फलोत्प्रेक्षा हुई।

नोट—फलोत्प्रेक्षा और हेतूत्प्रेक्षा में अन्तर—

प्रश्न करो कि किस फल की कामना से कार्य किया जाना माना गया है यदि उत्तर मिले तो फलोत्प्रेक्षा समझो नहीं तो हेतूत्प्रेक्षा।

---

१ तुअ=तेरे २ पाँय=पैर से ३ नहाता है ४ क्षीर सागर में।

७—दृष्टान्त

दृष्टान्त में पहले एक बात कह करके फिर उससे मिलत झुलती एक दूसरी बात पहली बात के उदाहरण के रूप कही जाती है।

उदाहरण

(१) सिव औरंगहि जिति सकै, आर न राजा राव।
हत्थि-मत्थ पर सिंह बिनु, आन' न घालै' घाव॥

यहाँ पहले एक बात कही गई कि शिवाजी ही औरंगजे को जीत सकते हैं अन्य राजा-राव नहीं। फिर उदाहरण रूप में एक दूसरी बात कही गई जो पहली बात से मिलत झुलती है कि सिंह के अतिरिक्त और कोई हाथी के माथे प घाव नहीं कर सकता। दोनों वाक्यों में साधारण धर्म एक होते हुए भी कुछ समानता है।

(२) काह कामरी' पामरी' जाड़' गये से काज।
रहिमन भूख बुताइये कैस्यौ मिलै अनाज॥

प्रथम पंक्ति में एक बात कह कर दूसरी पंक्ति में इससे मिलती झुलती दूसरी बात उदाहरण के रूप में कही गई है।

(३) पगी प्रेम नँदलाल के. हमें न भावत जोग'।

नोट—ध्यान रखना चाहिये कि इसमें अर्थान्तरन्यास की
न सामान्य बात का विशेष बात द्वारा या विशेष बात का
ान्य बात द्वारा समर्थन नहीं होता। इसमें दोनों बातें विशेष
ोती हैं।

इसी प्रकार प्रतिवस्तूपमा की भाँति इसमें दोनों बातों का
एक नहीं होता किन्तु भिन्न भिन्न होता है।

८—व्याज-स्तुति

जहाँ देखने में निन्दा पर वास्तव में स्तुति हो या देखने में स्तुति पर वास्तव में निन्दा हो वहाँ व्याजस्तुति अलंकार होता है। इसके दो भेद होते हैं—

(१) देखने में निन्दा पर वास्तव में स्तुति अर्थात् व्याज-स्तुति और

(२) देखने में स्तुति पर वास्तव में निन्दा अर्थात् व्याज-निन्दा।

प्रथम भेद

(१) जमुना तू अविवेकिनी, कहा कहौं तव ढंग।
पापिन सों निज बंधु[1] को, मान करावति भंग॥

यमुना में स्नान करने से पापी भी तर जाते हैं और उनको यम (ये यमुना के भाई होते हैं) का डर नहीं रहता। इस दोहे में जान तो ऐसा पड़ता है कि यमुना की निंदा की गई है पर वास्तव में उसकी प्रशंसा है कि यमुना पापियों को भी तार देती है और उनको नरक नहीं देखना पड़ता।

(२) मन क्रम[2] वचनों से अर्चना जो तुम्हारी।
निस दिन करते हैं श्याम तू हा! उन्हींकी॥
जनम जनम की है देह को छीन लेता।
अयि नटवर, तेरे ढंग ये हैं न अच्छे॥

भगवान् की अर्चना से जन्म-जन्मों का आवागमन मिटकर मोक्ष मिल जाता है और हमारा भौतिक शरीर नष्ट हो जाता

---

१ यमुना के भाई यमराज २ कर्म।

अभ्यास १

१—अनुप्रास किसे कहते हैं ? उदाहरण दो।

२—अनुप्रास के कितने भेद होते हैं ? अपनी पाठ्य-पुस्तक में से प्रत्येक भेद के तीन तीन उदाहरण दो।

३—अनुप्रास और यमक में क्या अन्तर है ? उदाहरण देकर समझाओ।

४—लाटानुप्रास और यमक का अन्तर बतलाओ। प्रत्येक का एक एक उदाहरण दो।

५—श्लेष किसको कहते हैं ? श्लेष के चार उदाहरण अपनी पढ़ी हुई पुस्तकों में से उद्धृत करो।

६—श्लेष और यमक का अन्तर स्पष्ट करो।

७—वर्णानुप्रास और शब्दानुप्रास किसे कहते हैं ? शब्दानुप्रास कौन कौन से हैं ?

अभ्यास २

१—उपमा की परिभाषा करो और तीन उदाहरण दो।

२—उपमेय और उपमान में क्या अन्तर है ? निम्नलिखित उदाहरणों में उपमेय उपमान बतलाओ—

(अध्यापक अपनी ओर से कई पद्य विद्यार्थियों को लिखा दें)।

३—प्रश्न २ के जिन उदाहरणों में साधारण धर्म नहीं है वहाँ कौन सा साधारण धर्म होना चाहिये ?

४—उपमा, उत्प्रेक्षा, और सन्देह के वाचक शब्द बतलाओ।

७—निम्नलिखित उदाहरणों में साधारण धर्म बताओ।
(अध्यापक कई उपमा के उदाहरण लिखा दें)

६—लुप्तोपमा किसे कहते हैं? अपनी पाठ्य-पुस्तक से दो उदाहरण दो।

अभ्यास ३

१—भ्रान्ति और सन्देह का अन्तर बतलाओ।
२—उल्लेख के दोनों भेदों में क्या अन्तर है?
३—उत्प्रेक्षा के पाँच उदाहरण अपने दो।
४—हेतूत्प्रेक्षा और फलोत्प्रेक्षा में क्या अन्तर है?
५—दृष्टान्त के दो उदाहरण बताओ।
६—समुद्र या बबूल की व्याजनिन्दा करो।
७—सांग रूपक क्या है? उदाहरण-पूर्वक समझाओ।
८—निम्नलिखित अवस्थाओं में क्या अलंकार होंगे?
(क) एक वस्तु में दूसरी वस्तु का धोखा हो जाय।
(ख) इस प्रकार स्तुति की जाय कि शब्दों से निन्दा जान पड़े।
(ग) जो हेतु नहीं हो उसे हेतु मान लिया जाय।
(घ) एक शब्द तीन बार उसी अर्थ में आवे।
(ङ) समस्त वाक्य के दो अर्थ निकलें।
(च) एक ही अक्षर अनेक बार आवे।

९—इन पद्यों या वाक्यों में कौन कौन से अलंकार हैं—
(अध्यापक कई वाक्य प्रत्येक बारी को लिखा दें और अगली बारी पर उत्तर कक्षा में सुनें)।

परिशिष्ट

प्रथमा परीक्षा के अतिरिक्त अलंकार

१ अतिशयोक्ति

जब कोई बात लोक-सीमा को उल्लंघन करके कही जाय। इसके सात भेद होते हैं—

(१) सम्बन्धातिशयोक्ति

जब सम्बन्ध न होने पर भी सम्बन्ध दिखाया जाय अर्थात् अयोग्य में योग्यता बताई जाय।

फवि[१] फहरहिं अति उच्च निसाना[२]।
जिन महँ अटकहिं विबुध[३]-विमाना॥

झंडों में देवताओं के विमानों तक ऊंचा उड़ने की योग्यत नहीं है फिर भी उनमें इस योग्यता का होना कहा गया। झंडे औ विमानों का सम्बन्ध न होने पर भी दोनों का सम्बन्ध होना कहा गया कि झंडे विमानों में अटकते हैं।

(२) असम्बन्धातिशयोक्ति

जब सम्बन्ध होने पर भी सम्बन्ध न बताया जाय अर्थात् योग्य में अयोग्यता बताई जाय।

जेहि वर वाजि[१] राम असवारा।
न बरणै पारा[२]॥

का वर्ण की योग्यता है

के वर्णन का सम्बन्ध है फिर भी सम्बन्ध को अस्वीकार किया गया है।

अति सुन्दर लखि सिय मुख तेरो।
आदर हम न करहिं ससि केरो[१]॥

चन्द्रमा में मुख की समानता करने की योग्यता है पर उसको अस्वीकार किया गया है।

(३) अक्रमातिशयोक्ति

जब कारण और कार्य का एक साथ होना कहा जाय।

बाणन के साथ छूटे प्राण दनुजन[२] के।

बाणों का छूटना कारण है जिससे प्राण छूटना कार्य होता है। पहले कारण होगा और फिर कार्य, पर यहाँ पर दोनों का एक साथ होना कहा गया।

(४) चपलातिशयोक्ति

जब कारण के देखते, सुनते, या मालूम होते, ही कार्य हो जाय।

तब सिव तीसर नैन उघारा।
चितवत[३] काम[४] भयउ जरि[५] छार[६]॥

शिव नयन—कारण। जलना—कार्य।
कारण के दिखाई देते ही कार्य होगया।

(५) अत्यन्तातिशयोक्ति

जब कारण के पहले कार्य हो जाय।

हनूमान के पूंछ में, लगन न पाई आग।
लंका सिगरी[७] जर गई, गये निसाचर भाग॥

---

१ का २ दैत्योंके ३ देखते ही ४ कामदेव ५ जलकर ६ राख ७ सारी।

आग लगना—कारण । जलना—कार्य ।

कारण के पहले कार्य हो गया ।

(६) भेदकातिशयोक्ति

जब और ही, निराला, न्यारा आदि शब्दों से किसी की अत्यन्त प्रशंसा की जाय—

यह चितवन[1] औरै कछू जेहि बस होत सुजान ।

यहाँ 'और ही है' यह कह कर चितवन की प्रशंसा की गई है ।

न्यारी रीति भूतल निहारी सिवराज की ।

यहाँ शिवाजी की नीतिरीति की प्रशंसा 'न्यारी' कह कर की गई है ।

(७) रूपकातिशयोक्ति

जब उपमेय का लोप करके केवल उपमान का कथन किया जाय और उसीसे उपमेय का अर्थ लिया जाय ।

कनक लता पर चन्द्रमा धरे धनुष दो बाण ।

यहाँ नायिका का वर्णन है—

कनक लता = सोने के से रंगवाली नायिका
चन्द्रमा = मुख
धनुष = भृकुटी
बाण = नेत्र कटाक्ष

यहाँ नायिका, मुख, भृकुटी, कटाक्ष आदि उपमेयों का लोप करके केवल लता, चन्द्र, धनुष, बाण इन उपमानों का

[1] देखना ।

वृक्ष समुद्र का पर यहां कल्पवृक्ष को समुद्र का कारण कहा गया है।

३ अपह्नुति

जब किसी बात का निषेध करके दूसरी बात का होना कहा जाय। इसके छः भेद हैं। प्रथम पाँच भेदों में सच्ची बात का निषेध करके झूठी बात को कायम किया जाता है और छठे भेद में झूठी बात का निषेध करके सच्ची बात कायम की जाती है।

(१) शुद्धापह्नुति

जब सच्ची बात का निषेध करके झूठी बात का होना कहा जाय।

अरी सखी यह मुख नहीं यह है अमल मयंक।

यहाँ मुख को देखकर कहा कि यह मुख नहीं चन्द्रमा है। सच्ची बात का निषेध कर के झूठी बात कही गई।

(२) हेत्वपह्नुति

जब सच्ची बात का निषेध कर झूठी बात कही जाय और इसका हेतु भी साथ ही बतला दिया जाय।

अंग अंग जारै अरी, तीछन ज्वाला-जाल।
सिंधु उठी वडवाग्नि यह, नहीं इन्दु भवभाल॥

चन्द्र को देख कर कहा गया यह चन्द्र नहीं वडवाग्नि है। इसका कारण बताया गया कि यह अङ्ग अङ्ग जलाता है। चन्द्रमा शीतल होता है जलाता नहीं अतः यह वडवाग्नि है।

(३) पर्यस्तापन्हुति।

यह वस्तु नहीं है किंतु एक दूसरी वस्तु ही यह वस्तु है— जहाँ पर ऐसा कहा जाय।

आग लगना—कारण। जलना—कार्य।

कारण के पहलेकार्य हो गया।

(६) भेदकातिशयोक्ति

जब और ही, निराला, न्यारा आदि शब्दों से वि
अत्यन्त प्रशंसा की जाय—

यह चितवन' औरे कछू जेहि बस होत सुजान।

यहाँ 'और ही है' यह कह कर चितवन की प्र
गई है।

न्यारी रीति भूतल निहारी सिवराज की।

यहाँ शिवाजी की नीतिरीति की प्रशंसा 'न्यारी'
की गई है।

(७) रूपकातिशयोक्ति

जब उपमेय का लोप करके केवल उपमान का
जाय और उसीसे उपमेय का अर्थ लिया जाय।

कनक लता पर चन्द्रमा धरे धनुष दो बा

यहाँ नायिका का वर्णन है—

कनक लता = सोने

समुद्र था पर यहां कल्पवृक्ष को समुद्र का कारण कहा गया है।

९ अपह्नुति

जब किसी बात का निषेध करके दूसरी बात का होना कहा जाय। इसके छः भेद हैं। प्रथम पाँच भेदों में सची बात का निषेध करके झूठी बात को कायम किया जाता है और छठे भेद में झूठी बात का निषेध करके सची बात कायम की जाती है।

(१) शुद्धापह्नुति

जब सची बात का निषेध करके झूठी बात का होना कहा जाय।

> अरी सखी यह मुख नहीं यह है अमल मयंक।

यहाँ मुख को देखकर कहा कि यह मुख नहीं चन्द्रमा है। सची बात का निषेध कर के झूठी बात कही गई।

(२) हेत्वपह्नुति

जब सची बात का निषेध कर झूठी बात कही जाय और उसका हेतु भी साथ ही बतला दिया जाय।

> अंग अंग जारै अरी, तीछन ज्वाला-जाल।
> सिंधु उठी बडवाग्नि यह, नहीं इन्दु भवभाल॥

चन्द्र को देख कर कहा गया यह चन्द्र नहीं बडवाग्नि है। इसका कारण बताया गया कि यह अङ्ग अङ्ग जलाता है। चन्द्रमा शीतल होता है जलाता नहीं अतः यह बडवाग्नि है।

(३) पर्यस्तापह्नुति।

यह वस्तु नहीं है किंतु एक दूसरी वस्तु ही यह वस्तु है— जहाँ पर ऐसा कहा जाय।

आग लगना—कारण। जलना—कार्य।

कारण के पहलेकार्य हो गया।

(६) भेदकातिशयोक्ति

जब और ही, निराला, न्यारा आदि शब्दों से किसी की अत्यन्त प्रशंसा की जाय—

वह चितवन' औरे कछू जेहि बस होत सुजान।

यहाँ 'और ही है' यह कह कर चितवन की प्रशंसा की गई है।

निहारी सिवराज की।

प्रशंसा 'न्यारी' कह कर

का कथन किया

।

वाण।

वृक्ष समुद्र का पर यहां कल्पवृक्ष को समुद्र का कारण कहा गया है।

३ अपह्नुति

जब किसी बात का निषेध करके दूसरी बात का होना कहा जाय। इसके छः भेद हैं। प्रथम पाँच भेदों में सची बात का निषेध करके झूठी बात को कायम किया जाता है और छटे भेद में झूठी बात का निषेध करके सची बात कायम की जाती है।

(१) शुद्धापह्नुति

जब सची बात का निषेध करके झूठी बात का होना कहा जाय।

अरी सखी यह मुख नहीं यह है अमल मयंक।

यहाँ मुख को देखकर कहा कि यह मुख नहीं चन्द्रमा है। सची बात का निषेध कर के झूठी बात कही गई।

(२) हेत्वपह्नुति

जब सची बात का निषेध कर झूठी बात कही जाय और इसका हेतु भी साथ ही बतला दिया जाय।

अंग अंग जारै अरी, तीछन ज्वाला-जाल।
सिंधु उठी बडवाग्नि यह, नहीं इन्दु भवभाल॥

चन्द्र को देख कर कहा गया यह चन्द्र नहीं बडवाग्नि है। इसका कारण बताया गया कि यह अङ्ग अङ्ग जलाता है। चन्द्रमा शीतल होता है जलाता नहीं अतः यह बडवाग्नि है।

(३) पर्यस्तापन्हुति।

यह वस्तु नहीं है किंतु एक दूसरी वस्तु ही यह वस्तु है—जहाँ पर ऐसा कहा जाय।

आग लगना—कारण। जलना—कार्य।

कारण के पहले कार्य हो गया।

(६) भेदकातिशयोक्ति

जब और ही, निराला, न्यारा आदि शब्दों से किसी की अत्यन्त प्रशंसा की जाय—

वह चितवन[1] औरे कछु जेहि बस होत सुजान।

यहाँ 'और ही है' यह कह कर चितवन की प्रशंसा की गई है।

न्यारी रीति भूतल निहारी सिवराज की।

यहाँ शिवाजी की नीतिरीति की प्रशंसा 'न्यारी' कह कर की गई है।

(७) रूपकातिशयोक्ति

जब उपमेय का लोप करके केवल उपमान का कथन किया जाय और उसीसे उपमेय का अर्थ लिया जाय।

कनक लता पर चन्द्रमा धरे धनुष दो बाण।

यहाँ नायिका का वर्णन है—

कनक लता = सोने के से रंगवाली नायिका
चन्द्रमा = मुख
धनुष = भृकुटी
बाण = नेत्र कटाक्ष

यहाँ नायिका, मुख, भृकुटी, कटाक्ष आदि उपमेयों का लोप करके केवल लता, चन्द्र, धनुष, बाण इन उपमानों का

१ देखना।

ुत समुद्र का पर यहां कल्पवृक्ष को समुद्र का कारण कहा या है।

३ अपह्नुति

जब किसी बात का निषेध करके दूसरी बात का होना कहा जाय। इसके छः भेद हैं। प्रथम पाँच भेदों में सच्ची बात का निषेध करके झूठी बात को कायम किया जाता है और छठे भेद में झूठी बात का निषेध करके सच्ची बात कायम की जाती है।

(१) शुद्धापह्नुति

जब सच्ची बात का निषेध करके झूठी बात का होना कहा जाय।

अरी सखी यह मुख नहीं यह है अमल मयंक।

यहाँ मुख को देखकर कहा कि यह मुख नहीं चन्द्रमा है। सच्ची बात का निषेध कर के झूठी बात कही गई।

(२) हेत्वपह्नुति

जब सच्ची बात का निषेध कर झूठी बात कही जाय और इसका हेतु भी साथ ही बतला दिया जाय।

अंग अंग जारै अरी, तीछन ज्वाला-जाल।
सिंधु उठी बडवाग्नि यह, नहीं इन्दु भवभाल॥

चन्द्र को देख कर कहा गया यह चन्द्र नहीं बडवाग्नि है। इसका कारण बताया गया कि यह अङ्ग अङ्ग जलाता है। चन्द्रमा शीतल होता है जलाता नहीं अतः यह बडवाग्नि है।

(३) पर्यस्तापह्नुति।

यह वस्तु नहीं है किंतु एक दूसरी वस्तु ही यह वस्तु है—

सुधा सुधा प्यारे नहीं सुधा अहै सत्संग।

सुधा सुधा नहीं है, सच्ची सुधा तो सत्संग है। सुधा का गुण सुधा से हटा कर सत्संग में रखा गया।

(४) छेकापन्हुति।

सच्ची बात को छिपा करके एक झूठी बात बना दी जाय।

अरध रात वह आवै भौन।
सुंदरता बरनै कवि कौन॥
देखत ही मन होय अनंद।
क्यो सखि, पियमुख ? ना सखि, चन्द॥

प्रियतम के मुख का दर्शन कर रही थी। फिर उसी बात को छिपाने के लिये एक झूठी बात बना दी कि मैं तो चन्द्र की बात कर रही हूँ।

(५) कैतवापन्हुति।

जब बहाने से, मिस, व्याज आदि शब्दों द्वारा सच्ची बात का निषेध करके झूठी बात का होना कहा जाय।

लखी नरेस बात सब साँची।
तिय-मिस मीचु[1] सीस पर नाची॥

यहाँ केकैयी का वर्णन है। कहा गया है कि केकैयी नहीं किन्तु मृत्यु है।

(६) भ्रान्तापन्हुति।

जब झूठी बात का निषेध करके सच्ची बात कही जाय।

कह प्रभु हँसि जनि हृदय डराहू[2]।
लूक[3] न असनि[4] न केतु न राहू॥
ये किरीट दसकंधर केरे।
आवत बालितनय[5] के प्रेरे॥

१ मृत्यु २ डरो ३ टूटा तारा ४ वज्र ५ अंगद।

रावण के मुकुटों को देख कर वानर डर गये। श्रीराम ने सची बात बतला कर उनका डर दूर कर दिया।

---

४ अर्थान्तरन्यास

जब पहले एक सामान्य बात कह कर उसका समर्थन करने के लिये एक दूसरी विशेष बात कही जाय या जब पहले एक विशेष बात कह कर उसका समर्थन करने के लिये एक दूसरी सामान्य बात कही जाय।

(१) टेढ़ जानि संका सब काहू। वक्र चंद्रमहि ग्रसै न राहू॥

पहले एक सामान्य बात कही कि टेढ़े को देख कर सब शंका खाते हैं इस बात को समर्थन करने के लिये एक दूसरी बात कही जो एक ही व्यक्ति चन्द्र से संबंध रखती है कि टेढ़े चन्द्र को देख कर राहु भी शंका खाता है।

(२) हरि राख्यो गोकुल विपद, का नहि करहि महान।

पहले एक विशेष बात कही कि हरि ने विपत्ति से गोकुल को बचा लिया। फिर इसके समर्थन में एक सामान्य बात कहदी कि बड़े पुरुष क्या नहीं कर डालते।

कथन किया गया है। परन्तु प्रसंग से नायिका का अर्थ ज्ञात हो जाता है।

---

२ विभावना

जब किसी कार्य के कारण के विषय में कोई विचित्र बात कही जाय।

इसके छः भेद होते हैं—

(१) प्रथम विभावना

जब बिना कारण कार्य हो जाय।

बिनु पद चलै सुनै बिनु काना।
कर बिनु कर्म करै विधि नाना॥

चलना कार्य का कारण पैर होता है, सुनने का कान, और करने का हाथ, परन्तु यहाँ इन कारणों के बिना ही कार्य हो जाते हैं।

(२) द्वितीय विभावना

जब अधूरे या अपर्याप्त कारण से कार्य हो जाय।

तो सो को सिवाजी, जेहि दो सौ आदमी सों जीत्यो
जंग सरदार सौ हजार असवार को॥

शिवाजी ने दो सौ सिपाहियों से लाख सिपाहियों को जीत लिया। जीतने कार्य का कारण सेना है पर यह इतनी काफी नहीं कि लाख सेना को जीत सके परन्तु फिर भी जीत लिया। इस प्रकार अधूरे या अपर्याप्त कारण से कार्य हुआ।

(३) तृतीय विभावना

कार्य को रुकावट उपस्थित होने पर भी कार्य हो जाय।

तेज[1] छत्र-धारीन[2] हू असहन[3] ताप करंत।

ताप करना=कार्य। तेज=कारण।

पर छत्ता होने से ताप करना कार्य नहीं हो सकता। छत्ता कार्य के मार्ग में रुकावट है पर यहाँ छत्ता रूप रुकावट होने पर भी कार्य हो जाता है।

(४) चतुर्थ विभावना

जो कार्य का कारण नहीं है उस कारण से कार्य का होना जब कहा जाय।

देखहु चम्पक की लता देत गुलाब-सुवास।

गुलाब की सुगन्धि का कारण गुलाब का पौधा होता है न कि चंपक लता। पर यहाँ चंपकलता से गुलाब की सुगंध निकलती है।

(५) पंचम विभावना

जब विरुद्ध कारण से कार्य हो।

कारे घन उमड़ि अँगारे बरसत है।

घन से अंगारे नहीं पानी बरसता है जो अंगारों का विरोधी है। पर यहाँ कहा गया है कि घन अंगारे बरसाता है।

(६) षष्ठ विभावना

जब कार्य से कारण उत्पन्न हो।

कर कल्पद्रुम सों करयो जस-समुद्र उत्पन्न।

हाथ दान देने में कल्प-वृक्ष के समान हैं उनसे यश का समुद्र उत्पन्न हुआ। समुद्र कल्पवृक्ष का कारण है न कि कल्प-

---

१ प्रताप २ छत्रधारी छत्तेवाले और राज-छत्रधारी अर्थात् राजा ३ असह्य।

५—अत्युक्ति

जब रोचकता लाने के लिये शूरता, उदारता, सुन्दरता, विरह, प्रेम आदि का बहुत बढ़ाकर या मिथ्यात्व-पूर्ण वर्णन किया जाय।

उदाहरण

(१) लखन सकोप वचन जब बोले।
डगमगानि महि दिग्गज डोले॥

लक्ष्मण के क्रोधित होकर बोलने से पृथ्वी डगमगा उठी और दिशाओं के हाथी काँप गये। पृथ्वी का डगमगाना और दिग्गजों का काँपना मिथ्या बात है। अतः मिथ्यात्वपूर्ण वर्णन होने से अत्युक्ति अलंकार हुआ। यहाँ शूरता का मिथ्यात्वपूर्ण वर्णन है।

(२) जा दिन चढ़त दल साजि अवधूतसिंह,
ता दिन दिगंत लौं दुवन[१] दाटियतु है।
प्रलै के से धाराधर[२] धमक नगारा, धूरि-
धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है॥
'भूषन' भनत, भुव-गोल कोल[३] हहरत,
कहरत दिग्गज, मगज फाटियतु है।
कीच से कचरि जात सेष के असेष फन,
कमठ[४] की पीठ पै पिठी सी बाँटियतु है॥

यहाँ अवधूतसिंह की धाक का मिथ्यात्वपूर्ण वर्णन अतिशय प्रशंसा के लिये किया गया है। इसलिये अत्युक्ति हुई।

(३) याचक तेरे दान से भये कल्पतरु भूप।

---

१ दुर्जन, शत्रु २ बादल ३ पृथ्वी को धारण करने वाला वाराह, ४ पृथ्वी को धारण करने वाला कच्छप।

राजा से याचकों ने इतना दान पाया कि वे कल्पवृक्ष बन गये (कल्पवृक्ष सब लोगों की सब इच्छाएँ पूर्ण करने वाला पेड़ है)। यहाँ राजा के दान का मिथ्यात्वपूर्ण वर्णन है। अतः अत्युक्ति हुई।

(४) गिनति न कछु पारस पदुम चिंतामणि के ताहिं।
निदरत मेरु कुबेर को तव जाचक जग माहिं॥

किसी राजा से कहा गया है कि तुम्हारे याचक पारस, चिंतामणि, मेरु, कुबेर आदि को अपने सामने कुछ नहीं गिनते अर्थात् तुमने इतना दान दिया है कि वे इनसे भी बढ़ गये।

यहाँ राजा की उदारता का मिथ्यात्व-पूर्ण वर्णन किया गया है। अतः अत्युक्ति हुई।

(५) वाके तन की छाँह ढिग जोन्ह[1] छाँह सी होत।

किसी स्त्री का वर्णन किया गया है कि वह इतनी सुन्दर है कि चाँदनी उसकी परिछाया की परिछाया जान पड़ती है। उसकी छाया भी चाँदनी से बढ़कर उज्ज्वल है फिर उसका तो कहना ही क्या! यहाँ सुन्दरता का अत्युक्ति पूर्ण वर्णन है।

(६) परसि विजोगिनि को पौन[2] गयो मानसर,
लागत ही औरै गति भई मानसर की।
जलचर जरे, औ सेवार जरि छार भये,
जल जरि गयो, पंक सूख्यो, भूमि दरकी॥

किसी विरहिणी स्त्री के विरह-ताप का वर्णन है। उसका विरह-ताप इतना तेज था कि जब पवन उसे छूकर मानसरोवर पहुँचा तो ताप के कारण उसके जलचर जल गये सेवार जल

१. उजेलना, चाँदनी २ पवन।

पिंगल-विचार

(१) छन्द दो प्रकार के होते हैं—(१) मात्रिक, और (२) वर्णिक।

(२) मात्रिक छंदों में मात्राओं की संख्या नियत रहती है और वर्णिक छन्दों में वर्णों की संख्या नियत रहती है।

(३) वर्ण दो प्रकार के होते हैं-(१) ह्रस्व, और(२) दीर्घ। पिंगल में इनको क्रमशः लघु और गुरु कहते हैं। लघु का निशान एक खड़ी पाई (।) और गुरु का निशान एक वक्र रेखा (ऽ) है।

(४) लघु की एक मात्रा और गुरु की दो मात्रायें समझी जाती हैं।

कोई वर्ण दो से अधिक मात्रा वाला नहीं होता।

मात्रा स्वरों की होती है व्यंजनों की नहीं। मात्रा गिनने में व्यंजन पर ध्यान नहीं दिया जाता।

(५) अ इ उ ऋ लृ ये लघु वर्ण हैं और इनकी एक-एक मात्रा होती है।

(६) आ ई ऊ ॠ ए ऐ ओ औ ये गुरुवर्ण हैं और इनकी दो दो मात्रायें होती हैं।

(७) ए और ओ एकमात्रिक या लघु भी होते हैं और तब उनकी एक ही मात्रा होती है।

(८) अनुस्वार और विसर्ग वाले स्वर गुरु होते हैं।

(९) चंद्र-बिंदु वाले स्वर की मात्रा, यदि स्वर लघु है तो एक और यदि दीर्घ है तो दो, गिनी जाती है—(हँसना में हँ की एक मात्रा है

हाँसी में हाँ

(१०) कहीं कहीं, विशेषतः संस्कृत शब्दों में, संयुक्त वर्ण के पूर्व का स्वर दीर्घ माना जाता है। जैसे—

कष्ट में क, सप्रभा में स।

नोट - उक्त उदाहरणों में ए और प्र की एक ही मात्रा होगी क्योंकि उनमें जो स्वर (अ) है वह लघुवर्ण है।

अपवाद—तुम्हारा (म्ह संयुक्तवर्ण होने पर भी तु एक-मात्रिक ही है क्योंकि पढ़ने में तु पर जोर नहीं पड़ता)।

(११) हलंत व्यंजन के पहले का वर्ण दीर्घ होगा। हलंत वर्ण की अपनी कोई मात्रा नहीं होती। जैसे—

सरित् (यहाँ रि गुरु है, त् की कोई मात्रा नहीं है)

विद्वान् (यहाँ द्वा गुरु है, न् की कोई मात्रा नहीं है)

(१२) कवित्त, सवैया आदि छन्दों में आवश्यकतानुसार गुरु वर्णों को भी लघु पढ़ा जाता है, और उनकी एक एक मात्रा गिनी जाती है। जैसे—

कविता करके तुलसी विलसे कविता लसी पर तुलसी की कला इसमें सी और की को सि और कि पढ़ा जायगा।

(१३) छन्द के चरण के अन्त का लघु वर्ण, आवश्यक हो तो, गुरु मान लिया जा सकता है।

(१४) तीन वर्णों का एक गण होता है। गण कुल ८ होते हैं। उनके नाम आदि नीचे दिये जाते हैं।

१ मगण	तीनों गुरु	SSS	भाराता
२ नगण	तीनों लघु	।।।	भरत
३ भगण	आदि गुरु	S।।	भारत
४ जगण	मध्य गुरु	।S।	भरात
५ सगण	अंत गुरु	।।S	भरता
६ यगण	आदि लघु	।SS	भराता

७ रगण	मध्य लघु	ऽ।ऽ	मरता
८ तगण	अंत लघु	ऽऽ।	मारात

वर्णिक छन्दों की गिनती गणों से की जाती है। गणों का रूप याद रखने के लिये नीचे लिखा सूत्र याद कर लेना चाहिये —

यमाताराजभानसलगा।

जिस गण का रूप जानना हो उस वर्ण से तीन वर्ण लेलो। उनका जो रूप होगा वही उस गण का रूप होगा। जैसे मगण का रूप जानना है तो मा से शुरू करके तीन वर्ण लेंगे—मातारा हुआ—तीनों गुरु वर्ण हैं अतः मगण के तीनों वर्ण गुरु होंगे। फिर सगण का रूप जानना है तो स से तीन वर्ण लेंगे—सलगा हुआ—तो सगण में पहले दो वर्ण लघु और अन्तिम वर्ण गुरु होगा।

(१५) छन्द को पढ़ते समय बीच में जहाँ जहाँ ठहरना पड़ता है उस स्थान (या उन स्थानों को) यतिस्थान कहते हैं।

(१६) छन्द को पढ़ने की लय को गति कहते हैं। मात्रा आदि पूरी होने पर भी यदि गति न हो तो छन्द नहीं बन सकता।

(१७) प्रत्येक छन्द में चार चरण होते हैं। कुंडलिया और छप्पय में छः चरण होते हैं।

(१८) जिन छन्दों के चारों चरणों में बराबर मात्रा या वर्ण हों वे सम कहलाते हैं।

(१९) जिनके पहले और तीसरे, तथा दूसरे और चौथे चरण बराबर मात्रा या वर्णों के होते हैं वे अर्धसम कहलाते हैं।

(२०) जिनके चारों चरण बराबर न हों या जिनमें अधिक चरण हों वे विषम कहलाते हैं।

(२१) मुख्य मुख्य छन्द आगे दिये जाते हैं—

१—मात्रिक सम

(१) चौपाई (१६)

प्रत्येक चरण में १६ मात्रायें होती हैं।

अन्त में जगण (।ऽ।) या तगण (ऽऽ।) नहीं होना चाहिये।

उदाहरण

जय जय गिरिवर राज-किशोरी।
जय महेश-मुखचंद-चकोरी॥
जय गजवदन-षडानन-माता।
जगत जननि दामिनि-दुति गाता॥

(२) रोला (११+१३=२४)

प्रत्येक चरण में चौबीस मात्रायें होती हैं।

पहले ग्यारहवीं मात्रा पर और फिर तेरहवीं मात्रा पर यति (विश्राम) होती है।

देव! तुम्हारे सिवा, आज हम किसे पुकारें?
तुम्हीं बतादो हमें, कि कैसे धीरज धारें।
किस प्रकार अब और, मरे मनको हम मारें?
अब तो रुकतीं नहीं, आसुओं की ये धारें॥

(३) गीतिका (१४+१२=२६)

प्रत्येक चरण में २६ मात्रायें होती हैं।

अंत में एक लघु और एक गुरु (।ऽ), या तीन लघु, (।।।) हो।

पहले चौदहवीं और फिर बारहवीं मात्रा पर यति होती है।

उदाहरण

धर्म के मग में अधर्मी, से कभी डरना नहीं।
चेत कर चलना कुमारग, में कदम धरना नहीं॥
शुद्ध भावों में भयानक, भावना भरना नहीं।
बोध-वर्धक लेख लिखने, में कमी करना नहीं॥

(४) हरिगीतिका (१६+१२=२८)

प्रत्येक चरण में २८ मात्रायें होती हैं।
अन्त में ।ऽ या ।।। हो।
यति १६ वीं और फिर १२वीं मात्रा पर होती है। गीतिका के पहले दो मात्रा जोड़ देने से हरिगीतिका छन्द हो जाता है।

उदाहरण

संसार की समरस्थली मे, धीरता धारण करो।
चलते हुए निज इष्ट पथ पै, संकटों से मत डरो॥
जीते हुए भी मृतक सम, रह कर न केवल दिन भरो।
वर वीर बन कर आप अपनी, विघ्न बाधायें हरो॥

२—मात्रिक अर्धसम

(५) दोहा

विषम अर्थात् पहले और तीसरे चरणों में १३।१३ मात्रायें होती हैं और सम अर्थात् दूसरे और चौथे चरणों में ११।११ मात्रायें होती हैं। सम चरणों के अन्त में जगण (।ऽ।), तगण (ऽऽ।) या नगण (।।।) हो। विषम चरणों के अन्त में जगण और तगण न हों।

उदाहरण

श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि।
बरनौं रघुबर विमल जस, जो दायक फल चारि॥

(६) सोरठा

यह दोहे का उलटा होता है।
पहले तीसरे चरणों में ११,११ और दूसरे चौथे चरणों में १३।१३ मात्रायें होती हैं। विषम चरणों की तुक मिलती है तथा उनके अन्त में जगण तगण या नगण रहता है। सम चरणों के अन्त में जगण और तगण नहीं रहते।

उदाहरण

बंदौ गुरु पद कंज, कृपासिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज, जासु बचन रविकर निकर॥

विशेष - दोहे और सोरठे के दो चरण एक ही पंक्ति में लिखे जाते हैं।

३—मात्रिक विषम

(७) कुंडलिया

कुंडलिया छन्द में ६ चरण होते हैं। पहले दो चरण दोहे की तरह और पीछे चार चरण रोले की भाँति होते हैं अर्थात् एक दोहा और एक रोला मिलाने से कुंडलिया बनता है। कुल छहों चरणों की मात्रायें ४८+९६=१४४ होती हैं। दोहे के चौथे चरण की रोला के आदि में आवृत्ति की जाती है। दोहे के आरम्भ में जो शब्द होता है (या होते हैं) वह (या वे) शब्द रोला के अन्त में फिर आता है (या आते हैं)।

उदाहरण

कोई संगी नहिं उतै, है इतही को संग।
पथिक ! लेहु मिलि ताहि तें,सब सों सहित उमंग॥
सब सों सहित उमंग, बैठि तरनी के माहीं।
नदिया-नाव-संजोग, फेरि मिलिहै यह नाहीं॥
बरनै दीनदयाल, पार पुनि भेंट न होई।
अपनी अपनी गैल, पथी जैहैं सब कोई॥

४—वर्णिक सम

(१) मत्तगयंद सवैया (७ भ + २ ग)
सात भगण और दो गुरु का होता है।
इसमें कुल २३ वर्ण नीचे लिखे अनुसार होते हैं—

ऽ॥	ऽ॥	ऽ॥	ऽ॥	ऽ॥	ऽ॥	ऽ॥	ऽऽ
भ	भ	भ	भ	भ	भ	भ	ग

उदाहरण

[illegible] तुम नाथ जहाँ रहता मन साथ सदैव यहीं है।
मूर्त्ति बसी उरमें यह नेक कभी टलती न कहीं है॥
[illegible] लोचन को दिखती यह चारु छटा सब काल यहीं है।
[illegible] योग मिला हमको जिसमें दुखमूल वियोग नहीं है॥

(२) कवित्त (मनहरण) (१६ + १५ वर्ण)
प्रत्येक चरण में ३१ वर्ण होते हैं।
पहले सोलहवें और फिर पन्द्रहवें वर्ण पर यति होती है।

उदाहरण

ग्राम हैं ललाम वही वही गिरि कानन हैं,
भानु-तनया का वही पुलिन पुनीत है।
गा कर सदैव जिसे बंशी थे बजाते तुम,
ग्वाल-बाल-वृन्द नित्य गाता वह गीत है॥
ब्रज में समस्त साज-बाज आज भी हैं वही,
हो रहा अतीत वर्त्तमान सा प्रतीत है।
चित्त को चुरा कर छिपे हो ब्रजराज कहाँ?,
भूल गया क्या तुम्हें मधुर नवनीत है?

रस-विचार

रस ९ होते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—

(१) शृंगार (२) हास्य (३) करुण (४) वीर (५) रौ
(६) भयानक (७) वीभत्स (८) अद्भुत (९) शान्त।

इनको याद रखने के लिये एक श्लोक दिया जाता है—

शृंगार-हास्य-करुण-वीर-रौद्र-भयानकाः ।
वीभत्साद्भुतशान्ताश्च काव्ये नव रसाः स्मृताः॥

(१) शृंगार का विषय प्रेम होता है। पुरुष के प्रति स्त्री के हृदय में या स्त्री के प्रति पुरुष के हृदय में जो प्रेम होता है उसी का वर्णन शृंगार में होता है जैसे सीता और राम का प्रेम या गोपियों और कृष्ण का प्रेम। शृंगार दो प्रकार का होता है—

(१) संयोग—जब प्रेमी और प्रेमपात्र जुदा नहीं होते, और

(२) वियोग—जब प्रेमी और प्रेमपात्र एक दूसरे से जुदा हों। इसमें विरह-व्याकुलता का वर्णन होता है।

(२) हास्य रस का विषय हास (या हँसी) होता है। विचित्र आकार या वेश वाले लोगों को देखकर एवं उनकी विचित्र चेष्टायें, कथन आदि देख सुनकर हँसी उत्पन्न होती है।

(३) करुण का विषय शोक होता है। किसी प्रिय व्यक्ति के मर जाने पर या किसी प्रिय वस्तु के नष्ट हो जाने पर र किसी अनिष्ट के आने पर शोक उत्पन्न होता है।

(४ वीर रस का विषय उत्साह या जोश होता है। ...हारों को देखकर, मारू बाजा एवं भाटों के वीर गीत सुन-कर, शत्रु को सामने पाकर लड़ने का उत्साह होता है। इसी प्रकार कभी किसी दीन हीन शोकार्त प्राणी को देखकर दया आती है और उसका कष्ट दूर करने का उत्साह उत्पन्न होता है, कभी याचकों को देख कर दान देने का उत्साह होता है, और कभी कष्ट सह कर और प्राण देकर भी धर्म पालन करने का उत्साह होता है। इस तरह से उत्साह अनेक प्रकार का होता है।

(५) रौद्र का विषय क्रोध है। अपने अपकार करने वाले शत्रु आदि को सामने देखकर क्रोध की उत्पत्ति होती है।

(६) भयानक का विषय भय है। सिंह इत्यादि भयंकर जीव, भयंकर प्राकृतिक दृश्य, बलवान् शत्रु आदि को देख सुन कर भय उत्पन्न होता है।

(७) बीभत्स का विषय घृणा या ग्लानि है। रक्त, माँस-मज्जा, दुर्गन्ध आदि वस्तुओं को देखकर मनमें ग्लानि पैदा होती है। इन्हींका वर्णन बीभत्स रस की कविता में होता है।

(८) अद्भुत रस का विषय आश्चर्य या विस्मय होता है। अलौकिक या अदृष्टपूर्व वस्तुओं को देखकर विस्मय का भाव उत्पन्न होता है।

(९) शान्त का विषय निर्वेद अथवा शम होता है। संसार की अनित्यता, दुःखमयता आदि देखकर सांसारिक वस्तुओं से वैराग्य उत्पन्न हो जाता है। शान्तरस की कविता में ऐसे वैराग्य का वर्णन होता है। भक्तिकी रचना भी शांत रस में ही सम्मिलित की जाती है।

रसों के उदाहरण

१—शृंगार

(क) संयोग शृंगार—

१—श्रीराम को देखकर सीता के हृदय में उत्पन्न प्रेम का वर्णन—

देखन मिस मृग-विहँग-तरु फिरति[1] बहोरि बहोरि[2]।
निरखि निरखि रघुबीर छवि बाढ़ी प्रीति न थोरि॥

देखि रूप लोचन ललचाने। हरखे जनु निज निधि पहिचाने।
थके नयन रघुपति छवि देखी। पलकन हू परहरी[3] निमेखी[4]।
अधिक सनेह देह भइ भोरी। सरद ससिहि जनु चितव चकोरी॥
लोचन-मगु रामहि उर आनी। दीन्हे पलक-कपाट सयानी॥

—रामचरित-मानस।

२—राघव[5] बोले देख जानकी के आनन[6] को—
'स्वर्गंगा[7] का कमल मिला कैसे कानन[8] को'।
'नील मधुप[9] को देख वहीं उस कंज-कलीने
स्वयं आगमन किया'-कहा यह जनक-लली[10]ने।

—जयशंकर प्रसाद।

३—सीता को देख कर श्रीराम के प्रेम का वर्णन—

करत बतकही अनुज सन मन सिय-रूप लुभान।
मुख-सरोज-मकरंद-छवि करत मधुप इव पान॥

—रामचरित मानस।

(ख) वियोग शृंगार—

१—श्रीकृष्ण के लिये विरहिणी राधा का कथन—

अब अप्रिय हुआ है क्यों उसे गेह आना।

---

१ लौटती है २ बारबार ३ पलकों ने पड़ना छोड़ दिया ४ देखती है। ५ श्रीराम ६ मुख ७ आकाशगंगा ८ वन ९ रामरूप नीला भ्रमर १० सीता।

प्रति दिन जिसकी ही ओर आँखें लगी हैं ॥
पग-हित जिसके मैं नित्य ही हूँ बिछाती।
पुलकित पलकों के पाँवड़े प्यार द्वारा।

—प्रिय प्रवास।

२—विरहिणी गोपियों का कथन—

निसि दिन बरसत नैन हमारे।
सदा रहत पावस रितु हम पर जब ते स्याम सिधारे ॥
दृग[1]अंजन लागत नहिं कबहूँ कर कपोल भये कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं सजनी उर बिच बहत पनारे[2] ॥

—सूरदास।

३—विरहिणी गोपियों का कथन—

बिनु गोपाल बैरिन भई कुंजैं।
तब ए लता लगति अति सीतल, अब भई विषम ज्वाल की पुंजैं ॥
वृथा बहति जमुना, खग बोलत, वृथा कमल फूलैं, अलि गुंजैं।
पवन पानि घनसार[3] सँजीवनि दधिसुत[4]-किरन भानु भइ[5] भुंजैं[6]।
सूरदास प्रभु को मगु जोवत अँखियाँ भई बरन[7] ज्यों गुंजैं[8] ॥

—सूरदास।

२—हास्य

१-घोड़ा गिरयो घर बाहर ही, महाराज[1] कछू उठवावन पाऊँ।
पैंड़ो[9] परो बिच[10] पैंड़ोइ माँझ चलै पग एक न कैसे चलाऊँ ?
होय कहारन को जु पै आयसु, डोली चढ़ाय इहाँ लगि लाऊँ।
जीन धरौं कि धरौं तुलसी मुख देहुँ लगाम कि राम कहाऊँ ?
[illegible] की दाल, छदाम के चाउर, घी अँगुरीन लै दूरि [illegible]।

इन क्षीण हमारे गात को प्राण, त्यागो
दुख-विवश नहीं तो नित्य रो-रो मरूंगो ॥
—प्रिय प्रवास ।

—अभिमन्यु की मृत्यु पर उत्तरा का विलाप—
प्रिय मृत्यु का अप्रिय महा संवाद पाकर विष भरा ।
चित्रस्थ सी, निर्जीव सी हो रह गई हत[1] उत्तरा ॥
संज्ञा[2] रहित तत्काल हो वह फिर धरा पर गिर पड़ी ।
उस समय मूर्च्छा भी अहो! हितकर हुई उसको बड़ी ॥

*   *   *   *

फिर पीट कर सिर और छाती अश्रु बरसाती हुई ।
कुररी सदृश सकरुण गिरा से दैन्य दरसाती हुई ॥
बहुविध विलाप-प्रलाप वह करने लगी उस शोक में ।
निज प्रिय-वियोग समान दुख होता न कोई लोक में ॥
—जयद्रथ वध ।

—सुदामा की दीन दशा देखकर श्रीकृष्ण का व्याकुल होना—
पाँय बेहाल बिवाइन सों भये, कंटक-जाल लगे पुनि जोये—
'हाय ! महादुख पाये सखा! तुम आये इतै न कितै दिन खोये ?'
देखि सुदामा की दीन दसा, करुना करि कै, करुनानिधि रोये ।
पानि परात को हाथ छुयो नहिं, नैननि के जलसों पग धोये ॥
—नरोत्तमदास ।

४—वीररस

१—जय के दृढ़ विश्वास—युक्त थे,
दीप्तिमान जिनके मुख—मंडल ।
पर्वत को भी खंड खंड कर,
रजकण कर देने को चंचल ॥

[1] अभागी, [2] होश ।

विप्र बुलाय पुरोहित कों अपने दुखकों बहु भाँति सुनावें
सादर सों आज गराज कियो सो भली विधिसों पुरख्या कुसलायो

२—चूरन अमल बेद का भारी।
जिसको खाते कृष्ण मुरारी॥
मेरा पाचक है पचलोना।
जिसको खाता श्याम सलोना॥
चूरन सभी महाजन खाते।
जिससे जमा हजम कर जाते॥
चूरन खाते लाला लोग।
जिनको अकिल अजीरन रोग॥
चूरन पुलिस वाले खाते।
सब कानून हजम कर जाते॥
चूरन खावें एडिटर जात,
जिनके पेट पचे नहिं बात॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र।

३—करुण

१—श्रीकृष्ण के चले आने पर यशोदा का विलाप—

प्रिय पति, वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है?
दुख-जलनिधि-डूबी का सहारा कहाँ है
लख मुख जिसका मैं आज लौं जी सकी हूँ,
वह हृदय हमारा नैन-तारा कहाँ है?

*　　*　　*　　*

बहुत सह चुकी हूँ और कैसे कहूँगी?
पवि-[1]सदृश कलेजा मैं कहाँ पा सकूँगी?

१—वज्र।

इन कृशित हमारे गात को प्राण, त्यागो
दुख-विवश नहीं तो नित्य रो-रो मरूंगी॥
—प्रिय प्रवास।

३—अभिमन्यु की मृत्यु पर उत्तरा का विलाप—
प्रिय मृत्यु का अप्रिय महा संवाद पाकर विष भरा।
चित्रस्थ सी, निर्जीव सी हो रह गई हत[1] उत्तरा॥
संज्ञा[2] रहित तत्काल ही वह फिर धरा पर गिर पड़ी।
उस समय मूर्च्छा भी अहो! हितकर हुई उसको बड़ी॥

* * * *

फिर पीट कर सिर और छाती अश्रु बरसाती हुई।
कुररी सदृश सकरुण गिरा से दैन्य दरसाती हुई॥
बहुविध विलाप-प्रलाप वह करने लगी उस शोक में।
निज प्रिय-वियोग समान दुख होता न कोई लोक में॥
—जयद्रथ वध।

४—सुदामा की दीन दशा देखकर श्रीकृष्ण का व्याकुल होना—
पाँय बेहाल बिवाइन सों भये, कंटक-जाल लगे पुनि जोये—
'हाय! महादुख पाये सखा! तुम आये इतै न किते दिन खोये?'
देखि सुदामा की दीन दसा, करुना करि कै, करुनानिधि रोये।
पानि परात को हाथ छुयो नहिं, नैननि के जलसों पग धोये॥
—नरोत्तमदास।

४—वीररस

१—जय के दृढ़ विश्वास—युक्त थे,
दीप्तिमान जिनके मुख—मंडल।
पर्वत को भी खंड खंड कर,
रजकण कर देने को चंचल॥

---

१ अभागी, २ होश।

फड़क रहे थे अति प्रचंड भुज—
दंड शत्रु—मर्दन को विह्वल।
ग्राम-ग्राम से निकल-निकल कर,
ऐसे युवक चले दल के दल॥

—स्वप्न।

२— भरत को सेना सहित आते देखकर लक्ष्मण का जोश में भरना-

उठि कर जोरि रजायसु[1] माँगा। मनहुँ वीर रस सोवत जागा।
बाँधि जटा सिर, कसि कटि भाथा। साजि सरासन सायक हाथा।
आज राम-सेवक-जस लेवौं। भरतहिं समर सिखावन देवौं।
जिमि करि-निकर[2] दलै मृगराजू। लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू।
तैसहिं भरतहि सेन-समेता। सानुज निदरि निपातौं[3] खेता।
जौ सहाय कर संकर आई। तदपि हतौं रन राम-दुहाई।

—रामचरित मानस।

३—कालिय नाग को देखकर श्रीकृष्ण का जोश में भरना—

स्व-जाति को देख अतीव दुर्दशा,
विगर्हणा[4] देख मनुष्य-मात्र की।
विचार के प्राणि-समूह-कष्ट को,
हुए समुत्तेजित वीर-केशरी[5]।
हितैषणा[6] से निज जन्म-भूमि की,
अपार आवेश प्रजेश को हुआ[7]।
बनी महा बंक[8] गँठी हुई भवें,
नितान्त विस्फारित नेत्र हो गये।

—प्रिय प्रवास।

४— सुदामा के चावलों को खाते हुए श्रीकृष्ण के प्रति रुक्मिणी का कथन—

हाथ गह्यौ प्रभु को[9] कमला, कहै नाथ, कहा तुमने चित धारी?

---

१ आज्ञा २ समूह ३ मारूँ ४ तिरस्कार ५ वीरों में सिंह ६ हितैषणा के कारण ७ श्रीकृष्ण ८ टेढ़ी ९ रुक्मिणी।

तंदुल खाइ मुठी दुइ, दीन कियो तुमने दुइ लोक-बिहारी।
खाइ मुठी तिसरी अब नाथ, कहा निज धाम की आस बिसारी।
रंकहि आप समान कियो, तुम चाहत आपहि होन भिखारी।

—नरोत्तमदास।

५—रौद्र रस

—श्रीकृष्ण के सुन वचन अर्जुन क्रोध से जलने लगे।
सब शोक अपना भूल कर करतल[१] युगल मलने लगे॥
'संसार देखे अब हमारे शत्रु रण में मृत पड़े'।
करते हुए यह घोषणा वे हो गये उठ कर खड़े॥
उस काल मारे क्रोध के तनु काँपने उनका लगा।
मानो हवा के जोर से सोता हुआ सागर जगा॥
मुख बाल-रवि सम लाल होकर ज्वाल सा बोधित हुआ।
प्रलयार्थ उनके मिस वहाँ क्या काल ही क्रोधित हुआ॥

—जयद्रथवध।

६—भयानक रस

१—समस्त सर्पों सँग श्याम ज्यों कढ़े,
कलिंद की नंदिनि के सु-अंक से[२]।
खड़े किनारे जितने मनुष्य थे,
सभी महाशंकित भीत हो उठे॥

हुए कई मूर्च्छित घोर त्रास से,
कई भगे, मेदिनि[३] में गिरे कई।
हुईं यशोदा अति ही प्रकंपिता,
व्रजेश[४] भी व्यस्त-समस्त[५] हो गये॥

—प्रियप्रवास।

---

१ हथेलियां २ यमुना में से ३ पृथ्वी ४ नंद ५ सर्वथा व्याकुल।

२—चकित चकत्ता[६] चौंकि-चौंकि उठै बार-बार,
दिल्ली दहसति चितै चाह करषति[७] है।
बिलखि बदन बिलखात बिजैपुरपति,
फिरत फिरंगिन[८] की नारी[९] फरकति है॥
थर थर काँपत कुतुब-साह गोलकुंडा,
हहरि हबस[१०]-भूप भीर भरकति है।
राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि,
केते बादसाहन की छाती दरकति है।

—भूषण।

७—बीभत्स रस

(श्मशान का दृश्य)

१—कहुँ सुलगति कोउ चिता कहूँ कोउ जाति बुझाई।
एक लगाई जाति एक की राख बहाई॥
विविध रंग की उठति ज्वाल दुरगंधनि महकति।
कहुँ चरबीसों चटचटाति कहुँ दहदह दहकति॥
कहुँ फूंकन हित धरयो मृतक तुरतहि तहँ आयो।
परयो अंग अधजरयो, कहूँ कोउ कर खायो॥
जहँ तहँ मज्जा माँस रुधिर लखि परत बगारे।
जित तित छिटके हाड़ स्वेत कहुँ, कहुँ रतनारे॥

*   *   *   *

कोउ कड़ाकड़ हाड़ चाबि नाचत दै ताली।
कोऊ पीवत रुधिर खोपरी की करि प्याली॥
कोउ अंतड़ी लै पहिर माल, इतराइ दिखावत।
कोउ चरबी लै चोप-सहित निज अंगनि लावत

—जगन्नाथदास 'रत्ना

---

६ औरंगजेब ७ भयभीत होती है ८ यूरोपियन [illegible]
वसीनिया।

८— अद्भुत रस

१—सती दीख कौतुक मग जाता । आगे राम सहित सिय भ्राता ॥
फिर चितवा पाछे, प्रभु देखा । सहित बंधु सिय सुन्दर वेखा ॥
जहँ चितवहिं तहँ प्रभु आसीना । सेवहिं सिद्ध मुनीस प्रवीना ॥
सोइ रघुवर सोइ लछमण सीता । देखि सती अति भई सभीता ॥
हृदय कंपु तनु सुधि कछु नाहीं । नयन मूँदि बैठी मग माहीं ॥
बहुरि विलोकेउ नयन उघारी । कछु न दीख तहँ दच्छकुमारी ॥
पुनि पुनि नाइ राम पद सीसा । चलीं तहाँ, जहँ रहे गिरीसा' ॥

—रामचरित मानस ।

९—शान्त रस

१—गहरी लाली देख कर फूल गुमान भये ।
केते बाग जहान में लग लग सूख गये ॥
२—कबीर यह जग कुछ नहीं खिन खारा खिन मीठ ।
कालि्ह जु बैठा' माड़ियाँ आज मसाणां' दीठ' ?
३—नाम भजो तो अब भजो बहुरि भजोगे कब्ब ?
हरियर हरियर रूँखड़ा इंधण हो गये सब्ब ?

४—काल आइ देखराई सौंटी[7]। उठि जिव चला छाँडि कै माटी[8]॥
का कर[9] लोग कुटुम घरबारू। का कर अरथ द्रव्य संसारू॥
वही घड़ी सब भया पराया। आपन सोइ जो परसा खाया॥
रहे जे हितू साथ के नेगी। सबै लाग काढ़न तेहि बेगी॥
हाथ झारि जस चलै जुवारी। तजा राज, ह्वै चला भिखारी॥
जब लग जीव, रतन सब कहा। भा बिन जीव, न कौड़ी लहा।

—पद्मावत।

१०—वात्सल्य रस

इन ९ रसों के अतिरिक्त कुछ लोग वात्सल्य नामक एक और दसवाँ रस मानते हैं। इसमें बालकों की क्रीड़ायें तथा उनकी नाना प्रकार की चेष्टाओं का वर्णन होता है जिनसे माता पिता के मन में स्नेह नामक स्थायी भाव जागृत होता है।

उदाहरण—

(१) मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी
किती बार मोहिं दूध पियत भई यह अजहूँ है छोटी।
तू जो कहति बल की बेनी ज्यों ह्वै है लाँबी मोटी।
काचो दूध पियावत पचि पचि, देत न माखन रोटी।

—सूरदास।

(२) हरि अपने आगे कछु गावत
तनक तनक चरनन सों नाचत मनहीं-मनहिं रिझावत।
बाँह उँचाइ काजरी धौरी गैयन टेरि बुलावत।
माखन तनक आपने कर लै तनक बदन में नावत[1]।
कबहुँ चितै प्रतिबिंब खंभ में लवनी[2] लिये खवावत।
दुरि देखत जसुमति यह लीला हरख अनंद बढ़ावत॥

सूरदास।

१ डालते हैं २ माखन ७ ठेका ८ शरीर ९ किसका।

रस सामग्री

१—स्थायीभाव—प्रत्येक रस में एक प्रधान मनोविकार होता है जिसके जागृत होने से रस का अनुभव होता है। इसको स्थायी भाव कहते हैं।

२—संचारी (या व्यभिचारी) भाव—प्रधान मनोविकार के साथ छोटे-छोटे कई और मनोविकार उत्पन्न होते हैं जो प्रधान मनोविकार के सहायक होते हैं और रस के अनुभव में सहायता करते हैं। ये स्थायीभावों की भाँति स्थिर नहीं होते किन्तु उत्पन्न हो हो कर (एवं सहायता का कार्य पूरा करके) जल तरंगों की भाँति नष्ट होजाते हैं। इनकी संख्या ३३ मानी गई है—

> निर्वेद ग्लानि श्रम हर्ष विषाद शंका
> आलस्य दैन्य मद मोह वितर्क चिन्ता
> आवेग त्रास मति स्वप्न विबोध निद्रा
> उन्माद व्याधि मरण स्मृति जाड्य धैर्य
> औत्सुक्य गर्व अवहित्थ अमर्ष व्रीड़ा
> चापल्य औ अपसमार तथा असूया
> ये उग्रता सहित तैंतिस, नाम जानो
> संचारि भाव अथवा व्यभिचारि मानो

३—विभाव—प्रधान मनोविकार के कारणों को विभाव कहते हैं। इसके दो भेद हैं—

(१) आलंबन—जिसके आधार पर अर्थात् जिसे देख-सुन कर मनोविकार उत्पन्न हो। जैसे, शृंगार में प्रेमपात्र स्त्री या पुरुष जिसे देखकर प्रेम उत्पन्न हो।

(२) उद्दीपन—जो उत्पन्न हुए मनोविकार को प्रदीप्त या उत्तेजित करे अर्थात् बढ़ावे। जैसे, वीररस में मारू बाजे चारणों का प्रोत्साहन आदि।

४—अनुभाव—मनोविकार उत्पन्न होने पर जो चेष्टा द्वारा प्रकट होता है। ऐसी चेष्टाओं को अनुभाव कहते हैं जैसे—मुख का खिलना, मुसकुराना, रोना, निःश्वास लेना भुजा फड़कना, आँखें लाल होना, होंठ चबाना, काँपना, रोमांच होना, नाक भौं सिकोड़ना, स्तंभित हो जाना, एकटक देखना, पसीना आना, आवाज काँपना, मुख पीला पड़ जाना जम्हाई आना, शरीर की सुधि न रहना इत्यादि।

५—प्रत्येक रस के स्थायीभाव, संचारीभाव, विभाव और अनुभाव नीचे देते हैं—

सं०	रस का नाम	स्थायी भाव	आलम्बन विभाव	उद्दीपन विभाव	अनुभाव	संचारीभाव
१	शृंगार	प्रेम (रति)	प्रेम-पात्र स्त्री या पुरुष अर्थात् नायक-नायिका	सुन्दर प्राकृतिक दृश्य, वसंत, संगीत आदि	मुख खिलना, एकटक देखना, मधुर आलाप, हावभाव, विनोद (संयोग)। रुदन, विलाप, प्रलाप, निःश्वास (वियोग)	प्रायः सभी
२	हास्य	हास (हँसी)	जिसको देख सुन कर हँसी आवे जैसे विदूषक	आलंबन की विचित्र चेष्टायें, विचित्र वेश या कथन या कोई विचित्रता आदि	मुसकुराना, हँसना, लोटपोट हो जाना, आँसू आ जाना	हर्ष, चपलता, आलस्य
३	करुण	शोक	१ प्रिय व्यक्ति जो मर गया हो या	दाह क्रिया, आलम्बन के गुणों	रुदन, विलाप-प्रलाप, पृथ्वी पर	मोह, विषाद,

			दीन दशा में हो २ प्रिय वस्तु जो नाश होगई हो	का स्मरण, तत्सं-वन्धी वस्तुओं का दर्शन आदि	लोटना, छाती, पीटना, निःश्वास भरना	जड़ता, उन्माद, व्याधि, ग्लानि, निर्वेद
४	वीर	उत्साह	जिस व्यक्ति को देख कर लड़ने का उत्साह हो या दान देने या सहायता करने का उत्साह हो जैसे शत्रु या दीन या याचक	शत्रु की ललकार, मारूबाजा, चारणों के गीत, दीन का दुःख या दारिद्रय, याचक की प्रशंसा आदि	भुजा फड़कना, मुख खिलना, सेना का उत्साह बढ़ाना, आक्रमण करना	गर्व, धृति, उग्रता
५	रौद्र	क्रोध	जिसको देख कर क्रोध आवे जैसे शत्रु या अपकारक	अपकारक या शत्रु की चेष्टायें, अनुचित कथन आदि	नेत्र लाल होना, भ्रकुटी चढ़ाना, होठ चबाना	गर्व, उग्रता, अमर्ष

६	भयानक	भय	[illegible]	[illegible] करना यढ़ाने वाली वस्तुयें आदि	[illegible], रोमाञ्च होना, स्वर भंग होना, घिग्घी बँधना	[illegible], शंका
७	बीभत्स	ग्लानि, घृणा (जुगुप्सा)	जिसको देखकर ग्लानि या घृणा हो जैसे श्मसान, माँस रुधिर, आदि	दुर्गन्ध आदि	नाक भौं सिकोड़ना, मुँह बिगाड़ना, रोमाञ्च	आवेग, मोह, व्याधि
८	अद्भुत	विस्मय	आश्चर्यकारक अलौकिक व्यक्ति या वस्तु	आलंबन के अद्भुत गुण कर्म आदि	एकटक देखना, स्तम्भित होना	वितर्क, मोह, हर्ष, जड़ता
६	शान्त	निर्वेद (वैराग्य) या शम	वैराग्य या शांतिजनक वस्तु या परिस्थिति	तीर्थयात्रा, सत्संगति पवित्र आश्रम आदि	रोमांच, प्रेमाश्रु गिरना	धृति, मति, हर्ष, चिन्ता

१०	वात्सल्य	स्नेह	सन्तान	आलंबन की चेष्टायें, बाल क्रीड़ायें आदि	मुख प्रसन्न होना, चूमना बलैया लेना	हर्ष आदि

- **भ्रान्तिमान्**
  - जब एक वस्तु में दूसरी का धोखा हो
  - "मणि मुख मेलि डार कपि देहीं"
- **संदेह**
  - जब निश्चय न हो कि यह है या वह है
  - 'यह कमल है या मुख'
- **उल्लेख**
  - किसी वस्तु का अनेक प्रकार से वर्णन
    - प्रथम — अनेक द्वारा
      - "कवि जन कल्प-द्रुम कहैं ग्यानी ग्यान समुद्र'
    - द्वितीय — एक ही द्वारा

(२) अर्थालङ्कार

उपमा

... दो वस्तुओं में समानता बताई जाय

- **पूर्णोपमा**

  उप- ...

- **लुप्तोपमा**

  जब इन चारों में से किसी एक या दो या तीन का उल्लेख शब्दों में न हो

  'मुख कमल जैसा है'

रूपक

जब एक वस्तु पर दूसरी का आरोप किया जाय

- **सांग**

  जब अंगों के सहित आरोप किया जाय

  उदित उदयगिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग। विकसे संत सरोज सब हरषे लोचन भृंग।

- **निरंग**

  जब अंगों का आरोप न किया जाय

  'मुख कमल है'

- **परंपरित**

  जब प्रधान रूपक का कारण एक गौण रूपक हो

  'आशा मेरे हृदय मरु की मंजु मंदाकिनी है'

अतिशयोक्ति
लोक सीमा उल्लंघन करके कथन करना

संबंध	असंबंध	अक्रम	चपल	अत्यंत	भेदक	रूपक
अयोग्य में योग्यता	योग्य में अयोग्यता	कार्य कारण का साथ होना	कारण का ज्ञान होते ही कार्य होना	कारण के पहले कार्य का होना	और, निराला आदि शब्दों से अतिशय प्रशंसा	केवल उपमान का कथन
कवि कहहिं अति उच्च निसाना। जिन राम महँ घटहिं विबुध विमान	जेहि पर बाजि असवारा तेहि सारदान परणे पारा	बाणन के साथ छूटे प्राण दनुजन के	देखत ही राम छूटे प्राण दनुजन के	हनुमान की पूंछ लगी नहिं आगी। ज्वाला जरै लंक सब लागी।	वह चितवन औरै कछू, जेहि बस होत सुजान।	कनकलता पर चंद्रमा धरे धनुष दो बाण

(२) अर्थालंकार (जब चमत्कार अर्थ में हो)

उत्प्रेक्षा

एक वस्तु को अन्य वस्तु मान लिया जाय

वस्तू० को वस्तु

हेतू० अहेतु को हेतु मान लेना

"मुख सम नहिं याते कमल जल में रह्यौ छुपाइ"

फलो० अफल को फल मान लेना

"तुअ मुख समता को कमल जल सेवत इक पायं"

शर्मा, आर्यभास्कर प्रेस, आगरा।

दृष्टान्त

एक बात कहकर उससे मिलती जुलती दूसरी बात उदाहरण के रूप में कहना

सिव औरंगहि जिति सकै और न राजा राव हत्थि मत्थ पर सिंह बिनु आन न घालै घाव"

व्याजस्तुति

निन्दा के बहाने स्तुति या स्तुति के बहाने निन्दा करना

"१जमुना तू अविवेकिनी कहा कहौं तव ढंग। पापिन सों निज बंधु को मान करावति भंग"

'२अहो मुनीश महा भट मानी"

विभावना

कारण के विषय में विलक्षण कल्पना

प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठ
बिना कारण कार्य होना	अपूर्ण कारण से कार्य होना	रुकावट होने पर भी कार्य होना	जो कारण नहीं है उससे कार्य होना	विरुद्ध कारण से कार्य होना	कार्य से कारण का होना
बिनु पद चलै सुनै बिनु काना	जीती सेना लाख की लेइ सवार हजार	तेज छत्रधारियों को भी, तेरा करता ताप अपार	देखो चंपक की लता देत गुलाब सुगंध	कारे कारे घन आ आकर अंगारे बरसाते हैं	लोचन-कमलों से यह देखो, अश्रुनदी वह आई है

अर्थालंकार

अपन्हुति

एक बात को निषेध करके दूसरी बात को कायम करना

शुद्ध	हेतु	पर्यस्त	छेक	कैतव	भ्रांत
सत्य बात का निषेध करके असत्य कथन	हेतु देकर सत्य का निषेध व असत्य का कथन करना	वस्तु का गुण उस वस्तु से हटा कर अन्य वस्तु में रखना	कही हुई सत्य बात को छिपा कर झूठी बात बना देना	मिस, बहाना आदि शब्दों से सत्य का निषेध व असत्य का कथन	सत्य बात कह कर शंका दूर करना
यह मुख नहीं चन्द्रमा है	यह मुख नहीं चंद्रमा है क्योंकि जलाता है।	चंद्र-चंद्र नहीं है मुख ही चंद्र है	सांझसमै लखि होत अनन्द। क्यों सखि पिय मुख ? ना सखि चन्द्र	मुख मिस लसि यह उगेउ सु-	डरहु न दावानल नहीं, फूले सघन पलास।

अर्थालंकार

अपन्हुति

एक बात को निषेध करके दूसरी बात को कायम करना

शुद्ध	हेतु	पर्यस्त	छेक	कैतव	भ्रांत
सत्य बात का निषेध करके असत्य कथन	हेतु देकर सत्य का निषेध व असत्य का कथन करना	वस्तु का गुण उस वस्तु से हटा कर अन्य वस्तु में रखना	कही हुई सत्य बात को छिपा कर झूठी बात बना देना	मिस, बहाना आदि शब्दों से सत्य का निषेध व असत्य का कथन	सत्य बात कह कर शंका दूर करना
यह मुख नहीं चन्द्रमा है	यह मुख नहीं चंद्रमा है क्योंकि जलाता है।	चंद्र-चंद्र नहीं है मुख ही चंद्र है	सांझसमै सखि होत अनन्द। क्यों सखि पिय मुख ? ना सखि चन्द	मुख मिस सखि यह उगेउ सुहाया	डरहु न दावानल नहीं, फूले सघन पलास।

अर्थालंकार

विभावना

कारण के विषय में विलक्षण कल्पना

प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठ
बिना कारण कार्य होना	अपूर्ण कारण से कार्य होना	रुकावट होने पर भी कार्य होना	जो कारण नहीं है उससे कार्य होना	विरुद्ध कारण से कार्य होना	कार्य से कारण का होना
बिनु पद चलै सुनै बिनु काना	जीती सेना लाख की एक सवार हजार	तेज छत्रधारियों को भी, तेरा करता ताप अपार	देखो चंपक की लता देत गुलाब सुगंध	कारे कारे घन आ आकर अंगारे बरसाते हैं	लोचन-कमलों से यह देखो, अश्रुनदी यह आई है

अर्थालंकार

अपन्हुति

एक बात को निषेध करके दूसरी बात को कायम करना

शुद्ध	हेतु	पर्यस्त	छेक	कैतव	भ्रांत
सत्य बात का निषेध करके असत्य कथन	हेतु देकर सत्य का निषेध व असत्य का कथन करना	वस्तु का गुण उस वस्तु से हटा कर अन्य वस्तु में रखना	कही हुई सत्य बात को छिपा कर झूठी बात बना देना	मिस, बहाना आदि शब्दों से सत्य का निषेध व असत्य का कथन	सत्य बात कह कर शंका दूर करना
यह मुख नहीं चन्द्रमा है	यह मुख नहीं चंद्रमा है क्योंकि जलाता है।	चंद्र-चंद्र नहीं है मुख ही चंद्र है	सांझसमै लखि होत अनन्द। क्यों सखि पिय मुख ? ना सखि चन्द	मुख मिस ससि यह उगेउ सुहाया	डरहु न दावानल नहीं, फूले सघन पलास।

विभावना

कारण के विषय में विलक्षण कहना

प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	षष्ठ
बिना कारण कार्य होना	अपूर्ण कारण से कार्य होना	रुकावट होने पर भी कार्य होना	जो कारण नहीं है उससे कार्य होना	विरुद्ध कारण से कार्य होना	कार्य से कारण का होना
बिनु पद चलै सुनै बिनु काना	जीती सेना लाख की तेइ सवार हजार	तेज छत्रधारियों को भी, तेरा करता ताप अपार	देखो चंपक की लता देत गुलाब सुगंध	कारे कारे घन आ आकर अंगारे बरसाते हैं	लोचन-कमलों से यह देखो, अश्रुनदी यह आई है

अर्थालंकार

- अर्थान्तरन्यास
  सामान्य का विशेष से या विशेष का सामान्य से समर्थन
  - प्रथम
    सामान्य का विशेष से समर्थन

    टेढ़ जानि संका सब काहू । वक्र चंद्रमहि ग्रसै न राहू ।
  - द्वितीय
    विशेष का सामान्य से समर्थन

    हरि राख्यो गोकुल विपद, का नहिं करहिं महान ।
- अत्युक्ति
  शूरता, उदारता, सुन्दरता आदि का मिथ्यात्व पूर्ण वर्णन

  (१) लखन सकोप वचन जब बोले । डगमगानि मही दिग्गज डोले ।

  (२ जाचक तेरे दानते भये कल्पतरु, भूप ।

  (३) वा के तन की छाँह ढिग जोन्ह छाँह सी होत ।